“MAA” OMWATI COLLEGE OF EDUCATION HASSANPUR (PALWAL)

AFFILIATED CRS UNIVERSITY, JIND

NOTES

B.P.Ed.- 3rd Sem
Sports Psychology

1

खेल मनोविज्ञान–अर्थ, महत्त्व तथा कार्यक्षेत्र

(Meaning, Importance and Scope of Sports Psychology)

आधुनिक शिक्षा प्रणाली में शारीरिक शिक्षा तथा खेल एक अभिन्न अंग के रूप में उभर कर सामने आए हैं। शारीरिक शिक्षा तथा खेलों में खिलाड़ी को न केवल शारीरिक एवं मानसिक रूप से स्वस्थ नहीं रखा जाता बल्कि विभिन्न खेलों के लिए तैयार किया जाता है। राष्ट्रीय व अर्न्तराष्ट्रीय स्तर पर अनेकों प्रतियोगिताओं का आयोजन किया जाता है। खिलाड़ी नियमित अभ्यास करके अपने आप को एक अच्छा खिलाड़ी बनने की कोशिश करता है। परन्तु इन विकास क्रियाओं के दौरान अनेक प्रकार की शारीरिक व मानसिक परेशानियों का सामना करना पड़ता है। इन कठिनाईयों के उचित समाधान के लिए अनेक मनोविज्ञानिक विश्लेषण की आवश्यकता पर बल दिया जाता है। सामान्य शिक्षा और शिक्षण को प्रभावशाली बनाने की आवश्यकता ने मनोविज्ञान को जन्म दिया।

व्यवसायिक खिलाड़ी बनने की चाह रखने वाले व्यक्तियों की संख्या में आई वृद्धि के कारण प्रतियोगिता में भाग लेने वाले खिलाड़ियों पर एक दबाव सा बना रहता है और यदि वह दबाव में रहकर किसी प्रतियोगिता में भाग लेता है तो उसका प्रदर्शन स्तर ऊपर नहीं उठ पाएगा। ऐसी परिस्थिति में एक प्रशिक्षक या शिक्षक का कार्य बहुत जटिल हो जाता है । उसे केवल खिलाड़ी की कौशल (Skill) का ही विकास नहीं करना होता बल्कि उसे मानसिक रूप से भी ऐसे तैयार करना पड़ता है जिससे वह हर प्रकार के दबाव से मुक्त होकर प्रतियोगिता में भाग ले सके। यह कार्य प्रशिक्षक तब

तक नहीं कर पाऐंगे जब तक उन्हें मनोविज्ञान का ज्ञान नहीं होगा। खेलों में बढ़ते हुए मुकाबले के कारण खेलों में मनोविज्ञान का महत्व दिन-प्रतिदिन बढ़ता जा रहा है ।

मनोविज्ञान का अर्थ (Meaning)

मनोविज्ञान को अंग्रेजी में Psychology कहते हैं जो दो शब्दों Psyche + Logus से मिलकर बना है। यहां पर Logus का अर्थ अध्ययन करना है, तथा Psyche का अर्थ समय-समय पर अलग-अलग लिया गया है कभी Psyche का अर्थ कभी आत्मा, कभी मन आदि लिया गया। जिसे मनोविज्ञान का अर्थ भी बदलता रहा।

मनोविज्ञान आत्मा का अध्ययन

सबसे पहले विद्वानों ने मनोविज्ञान को आत्मा का अध्ययन मानते थे। वे Psyche का अर्थ Soul अर्थात आत्मा मानते थे। दर्शनशास्त्र से निकट सम्बन्धों के कारण ही 'आत्मा' को मानव जीवन का वास्तविक आधार मानकर इसके अध्ययन पर उस समय के मनोविज्ञान में विशेष दबाव दिया जाता रहा।

लेकिन धीरे-धीरे इसकी आलोचना शुरू हो गई 'आत्मा' क्या है? 'आत्मा' का स्वरूप क्या है? यह अजर या अमर है या नहीं आदि प्रश्न उठने लगे तथा मनोविज्ञान के इस अर्थ को लोग गलत मानने लगे, तथा मनोविज्ञान के सही अर्थ के लिए खोज जारी रही।

मनोविज्ञान मन का अध्ययन

जब Psyche का अर्थ वनस मान्य न रहा तो अब विद्वान Psyche का अर्थ मन या Mind मानने लगे। उनके अनुसार मनोविज्ञान मन का अध्ययन (Study of Mind) करने वाला विज्ञय माना जाने लगा। अर्थात् मन+विज्ञान।

परन्तु कुछ समय बाद मनोविज्ञान की इस परिभाषा पर सन्देह के बादल घिर गए तथा आत्मा के अध्ययन की तरह, मनोविज्ञान के मन के अध्ययन

Scanned with CamScanner

करने वाला विषय पर भी प्रष्ठान उठने शुरू गए। इसके 'मन' की स्थिति व प्रकृति क्या है? इसके बाद मनोविज्ञान की नई परिभाषा के बारे में विचार शुरू हो गए।

मनोविज्ञान चेतना का विज्ञान
(Psychology is the Science of Consciousness)

इसके बाद विद्वानों ने Psyche का अर्थ Consciousness माना जाने लगा, अर्थात मनोविज्ञान का अर्थ चेतना का अध्ययन माना जाने लगा। 1890 में विलियम्स जेम्स द्वारा प्रकाशित अपनी पुस्तक में मनोविज्ञान को 'चेतना की अवस्था का अपने उसी रूप में वर्णन व व्याख्या करने वाले विषय के रूप में परिभाषित किया।

मनोविज्ञान को 'चेतना की अवस्था या व्यवहार का अध्ययन' करने वाले विषय के रूप में परिभाषित करने वाली यह परिभाषा भी अपने में निहित दोषों के कारण अधिक दिन तक नहीं चली।

1. इसमें व्यवहार के केवल एक ही पक्ष पर बल दिया गया। अचेतन या अर्धा चेतन का ज़िक नहीं है।

2. इसमें जीव जन्तुओं के व्यवहार का अध्ययन न करके केवल चेतन अवस्था में मानव व्यवहार के अध्ययन पर बल दिया गया।

3. यह विधि आत्म निरीक्षण पर बल देती है। यह विधि Subjective है। इसमें केवल कुछ सीमा तक अध्ययन सम्भव है, लेकिन पूरी तरह अध्ययन असम्भव है।

मनुष्य को ऐसी स्थिति से गुजरना पड़ता हे कि छोटी-अनुभूति जैसे घष्टणा, प्रेम, क्रोध आदि जागृत होते रहते हैं। इन सबका का व्यवहार पर क्या प्रभाव पड़ता है यह कोई भी मनुष्य ठीक-ठाक नहीं कर सकता। अत: केवल एक ही विधि पर बल देने के कारण मनोविज्ञान को चेतना के विज्ञान कहने पर भी असन्तोष पैदा होने लगा ।

मनोविज्ञान व्यवहार का विज्ञान

ऊपर लिखित परिभाषाओं से गुजरते हुए अन्त में मनोविज्ञान को व्यवहार का विज्ञान कहा जाने लगा। मनोविज्ञान को व्यवहार का विज्ञान मानने की धारणा सुपरिचित तथा सर्वमान्य है। मनोविज्ञान में व्यवहार शब्द का प्रयोग व्यापक रूप में किया है। इसका अर्थ मनुष्य में व्यवहार तक सीमित नहीं बल्कि इसमें मनुष्य द्वारा की जाने वाली सभी क्रियाएं सम्मिलित हैं।

इस प्रकार मनोविज्ञान ने सबसे पहले आत्मा को खोया, उसके बाद मन को खोया फिर चेतना को खोया लेकिन व्यवहार के साथ आज भी जीवित है।

मनोविज्ञान में विभिन्न परिस्थितियों में उसके द्वारा किये जाने वाले व्यवहार का वैज्ञानिक अध्ययन है। यदि यह कहा जाए मनोविज्ञान व्यवहार का विज्ञान है तो गलत नहीं होगा।

परिभाषाएं
(Definition)

विभिन्न विद्वानों ने मनोविज्ञान की अलग-अलग परिभाषाएं दी जो निम्न हैं:-

1. वाटसन के अनुसार - "मनोविज्ञान व्यवहार का विज्ञान है।" Psychology is the Study of Behaviour.

2. एम.एल. मन के अनुसार - "आजकल मनोविज्ञान का सम्बन्ध व्यवहार के वैज्ञानिक छान-बीन से है।"

M.L. Munn – Psychology today concern itself with the scientific investigation of behaviour.

3. वुडवर्थ एण्ड मार्किवस के अनुसार - "मनोविज्ञान व्यक्ति के क्रिया-कलापों के उससे परिवेश के सन्दर्भ में किया जाने वाला अध्ययन

Scanned with CamScanner

सकता इसलिए उसे मनोविज्ञान का पूर्ण ज्ञान अवश्य होना चाहिएं।

खेल मनोविज्ञान का शारीरिक शिक्षा के क्षेत्र में महत्व (Importance of Sports Psychology in the field of Physical Education)

जैसा कि पहले भी कहा जा चुका है कि एक प्रशिक्षक को खेल मनोविज्ञान का ज्ञान अवश्य होना चाहिएं अब प्रश्न यह उठता है कि कुशल प्रशिक्षण के लिए मनोविज्ञान का क्या महत्व होता है अथवा इसकी आवश्यकता क्यों होती है, जिसे निम्न तथ्यों की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता हैं :-

(क) खिलाड़ियों के मन में उठने वाले विचारों को यदि भली प्रकार से समझ लिया जाएं तो प्रशिक्षक इस तथ्य को समझ सकता है कि वह किस क्रिया के प्रति किस प्रकार की प्रतिक्रिया करेंगे तथा विभिन्न परिस्थितियों में उनका व्यवहार किस प्रकार का होगा। इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि खिलाड़ियों की विभिन्न क्रियाओं को नियंत्रित करने में खेल मनोविज्ञान विशेष भूमिका निभाता है अथवा सहायता प्रदान करता है।

(ख) सभी खिलाड़ियों की मूल प्रवृतियां तथा व्यवहार भिन्न-भिन्न होते है इसलिए प्रशिक्षक के लिए यह जानना अति आवश्यक होता है कि खिलाड़ी के व्यवहार का उसके टीम के अन्य खिलाड़ियों पर तथा टीम के प्रदर्शन पर किस प्रकार का प्रभाव पड़ेगा। यदि प्रशिक्षक इन तथ्यों का ज्ञान

Scanned with CamScanner

प्राप्त कर लेगा तो उसके लिए खिलाड़ियों में खेल भावना को विकसित कर पाना सरल हो जाएंगा।

(ग) खेल मनोविज्ञान की सहायता से प्रशिक्षक को खिलाड़ियों की मानसिक क्षमताओं का ज्ञान प्राप्त हो पाएंगा जिससे वह इस तथ्य का निध ारण कर पाएंगा कि प्रशिक्षण के लिए कौन सी विधि को प्रयोग किया जाना चाहिएं। यदि प्रशिक्षक खिलाड़ियों की मानसिक क्षमताओं के आधार पर ही क्रियाओं का अभ्यास करवाएं तो उससे प्रशिक्षण का कार्य सरल भी हो जाएंगा तथा उसमें कम समय भी लगेगा।

(घ) प्राय: यह देखा गया है कि खिलाड़ियों में कुशल खिलाड़ी बनने के गुण भी होते है तथा इच्छा भी परन्तु वह इस तथ्य का निर्धारण नहीं कर पाते कि उन्हें कौन से खेल में भाग लेना चाहिएं। इस कार्य को करने में प्रशिक्षक उन्हें सहायता प्रदान करता है तथा उनका मार्गदर्शन करता हैं। प्रशिक्षक केवल उसी स्थिति में कुशल मार्गदर्शन कर पाएंगा, जब उसे खिलाड़ियों की मानसिक क्षमताओं का पूर्ण ज्ञान होगा तथा ऐसा वह केवल मनोविज्ञान की सहायता से ही कर सकता है।

(ङ) खेल मनोविज्ञान की सहायता से एक प्रशिक्षक खिलाड़ियों में उन गुणों का विकास कर सकता है, जो नकारात्मक परिस्थितियों में भी उसे सकारात्मक रवैया अपनाने के लिए प्रेरित कर सकते हैं। प्राय: यह देखा जाता है कि जब प्रतियोगिता के दौरान टीम का प्रदर्शन निम्न रहता है अथवा कोई खिलाड़ी कुशल प्रदर्शन नहीं कर पाता तो टीम का कप्तान अपना नियंत्रण खो देता है तथा खिलाड़ियों के साथ अभद्रता के साथ व्यवहार करना आरम्भ कर देता है। इस प्रकार की स्थिति से बचने के लिए यह आवश्यक है कि प्रशिक्षक खिलाड़ियों में कुछ ऐसे गुणों को विकसित करे जिससे वह तनावपूर्ण परिस्थिति में भी स्वयं पर नियंत्रण बनाएं रख सकें तथा ऐसा केवल खेल मनोविज्ञान की सहायता से किया जा सकता है।

(च) प्रशिक्षण कार्यक्रम को केवल उसी स्थिति में प्रभावकारी ढंग से

निर्मित किया जा सकता है जब ऐसा करते समय प्रशिक्षक खिलाड़ियों की क्षमताओं का पूर्ण ध्यान रखें। ऐसा करते समय उनकी शारीरिक तथा मानसिक क्षमताओं को भली प्रकार से ध्यान में रखा जाना चाहिएं। इस प्रकार की जानकारी उसे केवल खेल मनोविज्ञान की सहायता से ही प्राप्त हो सकती है इसलिए प्रशिक्षक को इस विषय की भली प्रकार से जानकारी होनी चाहिएं।

इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि खिलाड़ियों द्वारा सामना की जाने वाली विभिन्न समस्याओं का समाधान खेल मनोविज्ञान की सहायता से किया जा सकता है तथा इसकी सहायता से उन्हें कुशल प्रदर्शन करने के लिए भी प्रेरित किया जा सकता है, जिस कारण यह अति आवश्यक है कि प्रशिक्षक को इस विषय का ज्ञान हो। हमारे देश में आज भी इस क्षेत्र का अधिक विकास नहीं हो पाया है परन्तु कई विकसित देशों में इस क्षेत्र का महत्व भली प्रकार से समझ लिया गया है तथा विभिन्न प्रकार के अनुसंध ानों को समय-समय पर किया जा रहा है जिससे खिलाड़ियों के प्रदर्शन स्तर को बेहतर बनाया जा सकें।

कई देशों में तथा मुख्यत: विकसित देशों में प्रशिक्षण के दौरान विशिष्ट खेल मनोवैज्ञानिकों को नियुक्त किया जाता है, जिन्हें इस क्षेत्र का विशिष्ट ज्ञान होता है परन्तु हमारे देश जैसे विकासशील देशों में, जहां पर धन तथा विभिन्न साधनों की कमी हैं, आज भी खेल मनोवैज्ञानिक का कार्य प्रशिक्षक द्वारा किया जाता है, जिसे इस क्षेत्र का विशिष्ट ज्ञान नहीं होता। इस प्रकार की स्थिति में प्रशिक्षकों के लिए इन क्षेत्र का ज्ञान प्राप्त करना अति आवश्यक तथा महत्वपूर्ण हो गया है तथा इसके लिए उन्हें विभिन्न प्रकार के साधनों को नियमित रूप से प्रयोग करते रहना चाहिएं जिससे उन्हें इस क्षेत्र में होने वाले नए-नए अनुसंधानों तथा शोधों से सम्बन्धित जानकारी प्राप्त होती रहें।

यद्यपि हमारे देश में यह क्षेत्र अभी पूर्ण रूप से विकसित नहीं हुआ

Scanned with CamScanner

परन्तु कुशल खिलाड़ियों को तैयार करने में इस क्षेत्र द्वारा प्रदान किए जाने वाले सहयोग अथवा भूमिका को किसी भी प्रकार से नकारा नहीं जा सकता। इस दिशा में उन सभी कदमों को उठाया जाना चाहिएं जिससे इसकी जानकारी प्रशिक्षकों को प्रदान की जा सकें अन्यथा कभी भी भारतीय खिलाड़ी अन्तर्राष्ट्रीय स्तर की प्रतियोगिताओं में कुशल प्रदर्शन नहीं कर पाएंगे तथा भारतीय खेल प्रेमियों की आशाएं हमेशा की तरह धराशाही होती जाएंगी।

जैसा की पहले भी कहा जा चुका है आज खेल तथा शारीरिक शिक्षा में विज्ञान ने प्रवेश कर लिया है। शारीरिक शिक्षा व खेलों के क्षेत्र में हर रोज नए-नए प्रयोग किए जा रहे हैं। जिससे खेलों में मुकाबला बहुत ज्यादा कठिन हो गया है। केवल शारीरिक अभ्यास करवाकर ही एक प्रशिक्षक किसी खिलाड़ी को ऊंचाईयों तक नहीं पहुंचा सकता। उसे खिलाड़ी के हर समय व्यवहार का अध्ययन करके उसकी समस्याओं का समाधान करना पड़ता है और यह सब मनोविज्ञान की सहायता से ही सम्भव हो पाता है। शारीरिक शिक्षा में मनोविज्ञान का महत्त्व इस प्रकार से हैं:-

1. व्यवहार के अध्ययन में सहायक
(Helpful in Study of Behaviour)

शारीरिक शिक्षा तथा प्रशिक्षण के दौरान एक खिलाड़ी का व्यवहार समय-समय पर बदलता रहता है। उसके विभिन्न परिस्थितियों के व्यवहार के अध्ययन में मनोविज्ञान बहुत सहायक होता है। एक प्रशिक्षक के लिए सबसे पहले खिलाड़ी के व्यवहार का अध्ययन बहुत जरूरी है। प्रशिक्षक के लिए यह जानना जरूरी होता है कि उसके व्यवहार का टीम के अन्य सदस्यों पर क्या प्रभाव पड़ेगा। यदि उसे मनोविज्ञान का ज्ञान होगा तो वह उनके व्यवहार का अध्ययन करके उनकी समस्याओं का हल कर पाएगा। इस प्रकार एक मनोविज्ञान व्यवहार के अध्ययन में सहायक है।

2. व्यक्तिगत विभिन्नता का ज्ञान
(Knowledge about Individual Difference)

कोई भी दो व्यक्ति शारीरिक और मानम्मिक रूप से एक समान नहीं हो सकते। उनके अन्दर कोई ना कोई विभिन्नता, क्षमता, रूचि, आदत या लैंगिग भिन्नता है, और इन विभिन्नताओं का ज्ञान मनोविज्ञान की सहायता से होता है। एक प्रशिक्षक के व्यक्तिगत भिन्नता का ज्ञान होना जरूरी है ताकि वह इसी विभिन्नता को ध्यान में रखकर प्रशिक्षण कार्यक्रम तैयार कर सके। जिससे खिलाड़ी के खेल का स्तर ऊपर उठ सके। अत: मनोविज्ञान एक प्रशिक्षक को व्यक्तिगत भिन्नता का ज्ञान करवाकर उसे खिलाड़ी के खेल स्तर को ऊपर उठाने में सहायक है।

3. वंशानुक्रम व वातावरण का ज्ञान
(Knowledge about Heredity & Environment)

वातावरण व वंशानुक्रम व्यक्ति के विकास में महत्त्वपूर्ण भूमिका निभाते हैं। व्यक्ति की व्यवहारिक क्रियाओं तथा कार्यकुशलता पर वंशानुक्रम तथा वातावरण का बहुत प्रभाव पड़ता है। मनोविज्ञान की सहायता से इनका अध्ययन करके एक खिलाड़ी पर इसके पड़ने वाले प्रभावों का अध्ययन किया जाता है ताकि उसे उसी के अनुसार प्रशिक्षण कार्यक्रम दिया जाए ताकि वह अपने स्तर को ऊंचा उठा सके। यदि एक प्रशिक्षक वंशानुक्रम व वातावरण को ध्यान नहीं रखेगा तो वह खिलाड़ी के खेल स्तर में विकास नहीं कर पाएगा।

4. विकास की अवस्थाओं का ज्ञान
(Knowledge about Development Stages)

मनोविज्ञान में व्यक्ति के विकास की विभिन्न अवस्थाओं अर्थात् बचपन, किशोर अवस्था, प्रौढ़ अवस्था में उनका शारीरिक, मानसिक, संवेगात्मक अध्ययन किया जाता है। विकास की इन विभिन्न अवस्थाओं के ज्ञान के बिना शारीरिक शिक्षा व खेल प्रशिक्षण प्रदान नहीं किया जा सकता। बच्चों का प्रशिक्षण कार्यक्रम उनकी आयु, लिंग, शारीरिक बनावट को ध्यान में रखकर ही चला पाएगा अन्यथा उनका प्रशिक्षण कार्यक्रम सफल नहीं हो पाएगा।

Scanned with CamScanner

5. सीखने में सहायक
(Helpful in Learning)

सीखने की प्रक्रिया में मनोविज्ञान बहुत सहायक है। मनोविज्ञान के विभिन्न नियमों का पालन करने से एक खिलाड़ी किसी भी कौशल को आसानी से सीख सकता है। शारीरिक शिक्षा कार्यक्रम में प्रशिक्षण प्राप्त करते समय सीखने के लिए उचित व उपयोगी वातावरण तैयार करना बहुत जरूरी है। प्रशिक्षण के लिए उचित प्रशिक्षण को अपनाना पड़ता है। यह सब मनोविज्ञान के ज्ञान से ही सम्भव हो पाता है क्योंकि मनोविज्ञान सीखने के सिद्धान्तों का निर्माण करता है।

6. उचित खेल के चुनाव में सहायक
(Helpful in Selecting the Game)

प्राय: आमतौर पर यह देखने में आता है कि बच्चों के सही मार्गदर्शन के अभाव में वे सही खेल का चुनाव नहीं कर पाते जिससे वे खेलों के उच्च स्तर तक नहीं पहुंच पाते। लेकिन यदि एक प्रशिक्षक को मनोविज्ञान का ज्ञान होगा तो वह उनकी व्यक्तिगत भिन्नता, वंशानुक्रम, रूचि आदि को देखकर उनके उचित खेल को चुनने में सहायता कर सकता है। जिससे वे अपने क्षेत्र में सफल हो सके। लेकिन ये सब मनोविज्ञान की सहायता से ही सम्भव हो पाएगा।

7. व्यक्तित्व व बुद्धि का ज्ञान
(Knowledge about Personality and Intelligence)

शारीरिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्ति का संर्वागीण विकास करना है। परन्तु मनोविज्ञान की सहायता के बिना ये सब असम्भव हैं। क्योंकि मनोविज्ञान व्यक्तित्व व बुद्धिमता के स्वरूप एवं विकास का अध्ययन करता है। मनोविज्ञान व्यक्तित्व के विकास की विभिन्न अवस्थाओं का अध्ययन करके इस बात का निश्चय करता है कि व्यक्तित्व के विकास के लिए कौन-कौन सी शारीरिक गतिविधियां जरूरी है।

8. मापन व मूल्यांकन का ज्ञान
(Knowledge about Measurement and Evaluation)

खिलाड़ियों की बुद्धि, रूचियों व प्राप्तियों के ज्ञान के लिए मनोविज्ञान बहुत जरूरी है मनोविज्ञान की सहायता से विभिन्न प्रकार के परीक्षणों द्वारा उनकी रूचि व बुद्धिमता के स्तर का पता लगाया जा सकता है।

9. खिलाड़ी के खेल स्तर को बढ़ाने में सहायक
(Helpful in Developing Performance of a Player)

मनोविज्ञान की सहायता से एक खिलाड़ी की शारीरिक व मानसिक क्षमता का पता लगाया जा सकता है और प्रशिक्षण तभी लाभकारी सिद्ध हो सकता है। जब प्रशिक्षण कार्यक्रम बनाते समय उसकी शारीरिक व मानसिक क्षमता का ध्यान रखा जाए और यह जानकारी केवल खेल मनोविज्ञान की सहायता से सम्भव है।

इस प्रकार कहा जा सकता है कि एक खिलाड़ी के सामने आने वाली विभिन्न प्रकार की समस्याओं का समाधान केवल मनोविज्ञान की सहायता से ही सम्भव हो पाएंगा तथा मनोविज्ञान की सहायता से एक खिलाड़ी को अच्छा प्रदर्शन करने के लिए प्रेरित किया जा सकता है। परन्तु इसके लिए प्रशिक्षक को मनोविज्ञान का ज्ञान होना बहुत जरूरी है।

आज लोगों ने इस विषय के महत्व को समझा इसलिए आज किसी भी देश की राष्ट्रीय टीम के साथ एक मनोवैज्ञानिक रखा जाता है ताकि वह खिलाड़ियों के व्यवहार का अध्ययन करके उनके सामने आने वाली समस्याओं का समाधान कर सकें ताकि वे उच्च प्रदर्शन कर सके।

शैक्षिक मनोविज्ञान की विशेषताएं

शैक्षिक मनोविज्ञान की विशेषताओं को निम्न बिन्दुओं के आधार पर प्रस्तुत किया जा रहा है:-

(क) शिक्षा-मनोविज्ञान के अन्तर्गत शैक्षिक परिस्थितियों का अध्ययन मनोविज्ञानिक तरीके से किया जाता है। इस प्रकार इसके द्वारा किए जाने

Scanned with CamScanner

वाले अध्ययन में मनोविज्ञानिकता का समावेश होता है।

(ख) सीखने का मनोविज्ञान एक स्वतन्त्र विषय माना जाता है। यह स्वतन्त्र विषय के रूप में भी विकसित हुआ है। इसके द्वारा छात्रों को स्वयं के द्वारा अध्ययन किया जाना भी सिखाया जाता है। उनकी रूचि के अनुरूप उन्हें अध्ययन कराया जाता है। शिक्षक के द्वारा कक्षा में उन्ही विधियों का प्रयोग किया जाता है, जो उसके छात्रों के अधिगम के लिए विशेष रूप से सहायक सिद्ध होती है। वह कक्षा में विभिन्न छात्रों के शैक्षिक स्तर को ध्यान में रखते हुए विभिन्न प्रकार की विधियों का उपयोग करता है, और शिक्षा को पूर्ण करने में सक्षमता प्रदान करता है।

(ग) शिक्षा-मनोविज्ञान के माध्यम से बालक, किशोर, प्रौढ़ आदि सभी व्यक्तियों के द्वारा किए जाने वाले व्यवहारों का अध्ययन किया जाता है। यह अध्ययन उनके सीखने से सम्बन्धित होता है। शिक्षा-मनोविज्ञान मानव के सीखने के व्यवहार का अध्ययन भी किया जाता है।

शैक्षिक तथा खेल मनोविज्ञान का क्षेत्र
(Scope of Educational and Sports Psychology)

शिक्षा मनोविज्ञान ने आज अपना पूर्ण रूप शिक्षा के क्षेत्र में विकसित कर लिया है। यह मनोविज्ञान को व्यावहारिक रूप में प्रस्तुत करने का एक सफल और लाभदायक साधन है। इसके द्वारा शिक्षा को एक विशेष रूप से प्रस्तुत किया जा सकता है। परन्तु इसके क्षेत्र के सम्बन्ध में कुछ भी विस्तृत या स्पष्ट रूप से नही कहा जा सकता। इसका क्षेत्र इतना अधिक विस्तृत है कि यदि इसके क्षेत्र का अध्ययन करने की चेष्टा की जाए तो शिक्षा के क्षेत्र से लेकर व्यक्ति के व्यावसायिक क्षेत्र का अध्ययन इसके अन्तर्गत किया जा सकता है। क्योंकि यह मनुष्य की शिक्षा से लेकर उसके व्यवसाय तक चलता हैं। यह मनुष्य के विभिन्न प्रकार के व्यवहारों का सफल अध्ययन कराने में सक्षम होता है।

शिक्षा मनोविज्ञान को नवीन एवं प्रगतिशाली ज्ञान कहा जाता है। यह एक ऐसा विज्ञान की जिसके कार्यक्षेत्र की सीमाएं असीमित है। अर्थात् जिसके

कार्यक्षेत्र का अध्ययन किया जाना कठिन है। इसकी सीमाएं प्रगतिशील होती है, और इनका अध्ययन किया जाना आसान नहीं होता। इसकी सीमाएं अस्थिर भी कहलाती है। शिक्षा मनोविज्ञान के क्षेत्र में जिन महत्वपूर्ण क्षेत्रों का अध्ययन किया जाता है उनका वर्णन निम्नलिखित प्रकार से किया जा रहा है:-

(क) शैक्षिक प्रयोग तथा शोध- शैक्षिक प्रयोग एवं शोध के अन्तर्गत विभिन्न प्रकार की समस्याओं का वैज्ञानिक आधार पर अध्ययन किया जाता है तथा इनके आधार पर सिद्धान्त एवं निष्कर्षो को निकाला जाता है। यह निष्कर्ष तथ्यों पर आधारित होने के कारण अति वैज्ञानिक माने जाते है।

(ख) इसेक अन्तर्गत व्यक्तिगत, व्यवसायिक एवं शैक्षिक निर्देशनों को ध्यान में रखते हुए छात्रों के व्यवहार का अध्ययन किया जाता है। यह अध्ययन भी मनोविज्ञान आधार पर किया जाता है।

(ग) बुद्धि- लब्धि और व्यक्तित्व का माप और परीक्षण- शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत व्यक्ति की बुद्धि और उसके व्यक्तित्व का माप किया जाता है। व्यक्ति की बुद्धि जिस प्रकार की होती है उसी प्रकार का उसका व्यक्तित्व भी माना जाता है। बुद्धि का प्रयोग करके ही वह समाज में होने वाले विभिन्न व्यवहारों को अपने व्यवहार में परिणित करता है। यदि उसका बौद्धिक स्तर उन्नत है और उसके द्वारा सभी प्रकार के अध्ययनों का भली प्रकार से समझा जा रहा है तो इससे निश्चय ही उसके व्यक्तित्व में केवल अच्छाईयों का समावेश ही होगा और वह बुराईयों की ओर कभी भी अग्रसित नहीं होगा। इसके अन्तर्गत विभिन्न तथ्यों का संकलित किया जाता है, जिनका वर्णन निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है:-

1. परीक्षण- इससे छात्र के द्वारा की जाने वाली शिक्षा का परीक्षण किया जाता है जिसके आधार पर यह पता लगाया जाना आसान हो जाता है कि उस छात्र ने किसी विधि विशेष के प्रयोग के द्वारा कितनी सीमा तक अध्ययन किया है या उस अध्ययन का उसके व्यक्तित्व पर क्या प्रभाव पड़ा है।

Scanned with CamScanner

2. व्यक्तिगत योग्यता का माप- इसके अन्तर्गत छात्रों की व्यक्तिगत योग्यता का माप भी कर लिया जाता है कि छात्रों में विद्यमान योग्यता किस स्तर की है। या छात्र किसी विषय के अध्ययन के लिए किस सीमा तक अपने को ढाल सकते हैं।

(घ) मानसिक स्वास्थ्य एवं मानसिक स्वास्थ्य विज्ञान- इसके अन्तर्गत व्यक्ति के मानसिक स्वास्थ्य को बनाए रखने के लिए विभिन्न प्रकार की वैज्ञानिक विधियों का अपनाया जाता है, जिनके द्वारा मानसिक विकास में आने वाली बाधाओं को भी दूर किए जाने में आसानी होती है।

(ङ) शैक्षिक समस्याओं से सम्बन्धित अध्ययन- शिक्षा मनोविज्ञान के अन्तर्गत छात्रों की विभिन्न शैक्षिक समस्याओं का अध्ययन भी किया जाता है। यह समस्याएं उनकी शिक्षा में आने वाली बाधाओं के रूप में होती है जिनका यदि शीघ्र ही निपटारा या सुलझाया नहीं जाए तो इससे छात्रों का विशेष रूप से परेशानियों का सामना करना पड़ता है। इसके अन्तर्गत निम्न प्रकार के तथ्यों को शामिल किया जाता है:-

1. **व्यवहार एवं आचरण की समस्याएं-** व्यक्ति का व्यवहार एवं आचरण उसके चरित्र का निर्माण करने में सहायक होता है। किसी भी व्यक्ति के चरित्र का अध्ययन करने के लिए उसके व्यवहार एवं उसके द्वारा किए जाने वाले आचरण का अध्ययन किया जाना विशेष रूप से लाभदायक माना जाता है। यह अध्ययन उसके अन्दर विद्यमान विभिन्न प्रकार की विशेषताओं एवं दोषों को प्रकट करने में भी सहायता प्रदान करता है। अत: यदि वह समाज में किसी वर्ग विशेष के साथ दुर्व्यवहार करता है या किसी व्यक्ति को वह नीचा दिखाने की कोशिश करता है तो इससे निश्चय ही उसे भी उस वर्ग विशेष के द्वारा नीचा देखने को मिल सकता है। इस हेतु यह बात अवश्य ध्यान में रखने वाली होती है कि व्यक्ति जैसा व्यवहार स्वयं के साथ होता देखना चाहता है वह वैसा ही व्यवहार अन्यों के साथ करे।

2. **व्यक्तिगत विभिन्नताओं की समस्याएं-** सभी व्यक्तियों अपनी-अपनी विशिष्ट योग्यताएं पाई जाती है। उन्हीं के आधार पर समाज में उनकी

पहचान होती है। यह व्यक्तिगत विभिन्नताए उन्हें समाज में अपना विशिष्ट स्थान बनाने में सहायता प्रदान करती है। शिक्षक भी कक्षा में छात्रों में विद्यमान व्यक्तिगत विभिन्नताओं के आधार पर उनका विभाजन कर देता है, और इसी व्यक्तिगत विभिन्नता के आधार पर वह उन्हें उनकी योग्यताओं के आधार पर शिक्षण प्रदान करने में सक्षम होता है। इस प्रकार का अध्ययन उनके व्यक्तित्व के विकास में एक सहायक के रूप में कार्य आता है। यदि शिक्षक के द्वारा कक्षा में विभिन्न छात्रों के विशिष्ट योग्यताओं वाले स्तर का ज्ञान नहीं किया जाता या वह उनके सन्दर्भ में विशेष ध्यान नहीं देता, तो इससे उन छात्रों का सर्वांगीण विकास भी सम्भव नहीं हो सकता, और वे अपने लक्ष्यों की ओर भी उन्मुख होने में सक्षम रहते हैं।

3. **सीखने-सिखाने की समस्याएं-** छात्र विद्यालयों में सीखने के लिए एवं शिक्षक सिखाने के लिए जाता है। इन दोनों के सम्मिश्रित कार्यों के द्वारा इनका कार्य आसान हो जाता है और ये दोनों ही अपने-अपने विशिष्ट कार्य करते हैं। यह देखा जाता है कि कई छात्र अपने मानसिक स्तर के अल्प उन्नत होने के कारण शिक्षकों से प्रश्न पूछने में अक्षम होते हैं। यह उनके व्यक्तित्व के विकास में एक बाधा के समान कार्य करता है। इसके द्वारा वह अपने विचारों एवं अभिव्यक्तियों को छात्रों के समक्ष उपस्थित करने में भी अक्षम होते हैं। अत: शिक्षा मनोविज्ञान के द्वारा उनकी इन सभी प्रकार की समस्याओं का समाधान किया जाता है, और शिक्षा मनोविज्ञान के आधार पर उसे अपने विचारों का प्रकटीकरण करने की ओर भी प्रेरित किया जाता है ताकि वह अपने मन में विद्यमान सभी प्रकार की कुंठाओं को बाहर निकाल दें और शिक्षण अधिगम करने में भी सक्षमता प्राप्त करते हैं।

(च) शैक्षणिक परिस्थितियों का अध्ययन- शिक्षण के सभी उपकरणों के माध्यम से शिक्षक के द्वारा कक्षा में ऐसी परिस्थितियों का निर्माण किया जाता है जिसके द्वारा वह अपने शिक्षण को सुचारू रूप से चलाने में सक्षमता प्राप्त करे। शिक्षक का कर्त्तव्य छात्रों को पूर्ण रूप से अध्ययन कराना होता है। इसके लिए वह विभिन्न शिक्षण विधियों को अपनाता है एवं उनके आधार पर वह छात्रों को शिक्षा प्रदान करता है। यदि आवश्यकता

Scanned with CamScanner

3

गामक (मोटर) सिखलाई तथा अनुभूति

(Motor Learning and Perception)

सीखने का अर्थ

सीखना व्यक्ति में स्वाभाविक रूप से पाया जाता है। वह जन्म से कुछ न कुछ सीखता रहता है। यह उसे प्रकृति द्वारा प्राप्त गुण कहा जाता है। प्रकृति ने मानव को देह के साथ-साथ चेतना शक्ति भी प्रदान की है। मनुष्य की महान् परिसम्पित्तियों से सीखना भी मानी जाती है। सीखने के लिए मनुष्य का जन्म प्रदान किया गया है, ऐसा अनेक मनुष्यों के द्वारा सोचा जाता है। और यह बात सत्य भी है यदि मनुष्य में सीखने की प्रक्रिया समाप्त कर दी जाती है तो उसमें और पशुओं किसी प्रकार अन्तर नहीं होगा। सीखना उसके लिए विकास की प्रथम सीढ़ी मानी जाती है। किसी भी कार्य को करने से पूर्व उसके सम्बन्ध योजना बनानी पड़ती है परन्तु यहां पर एक बात आवश्यक रूप से ध्यान देने वाली होती है कि योजना का निर्माण अनुभवों के आधार पर किया जा सकता है। यदि व्यक्ति में कौशलों का अभाव है तो वह किसी कार्य के प्रति योजना नहीं बना सकते।

सर्वप्रथम बालक के द्वारा अपने परिवार सदस्यों विभिन्न कौशलों को सीखा जाता है। उसके परिवार के सदस्य उसे ज्ञान प्रदान करने का कार्य करते हैं। परिवार व्यक्ति की प्रथम पाठशाला भी कहा जाता है। यहां पर उसे अपने माता-पिता के द्वारा विभिन्न प्रकार की नैतिक एवं सामाजिक शिक्षाएं प्रदान की जाती है। अतः स्पष्ट है कि परिवार में रहकर ही बालक सर्वप्रथम सिखलाई की प्रक्रिया का विकास करता है।

उसके पश्चात् बालक का सम्पर्क विद्यालय से होता है। विद्यालय

Scanned with CamScanner

उसके लिए सीखने की विभिन्न परिस्थितियों का निर्माण करता है। विद्यालय में बालक अन्य बालकों का सहयोग प्राप्त करता है और वहां पर भी उसे विभिन्न प्रकार के कौशल सीखने को मिलते है। शिक्षक के द्वारा उसका इस हेतु सहायता की जाती है। शिक्षक छात्रों को विभिन्न तकनीकों एवं शिक्षा विधियों का प्रयोग करके शैक्षिक नियमों एवं पाठ्यक्रम सिखाता है। अत: विद्यालय को बालक की सिखलाई का दूसरा क्षेत्र कहा जा सकता है।

सबसे अन्त में वह समाज के सम्पर्क में आता है। परिवार तथा विद्यालय में उसने जो भी कुछ माता-पिता तथा शिक्षक के द्वारा सिखा वह उसका प्रयोग समाज के अन्य वर्गो पर करता है। यहां पर आकर उसके सीखने का अर्थ पूर्णत: बदल जाता है। उसे सीखने के लिए किसी का सहयोग लेने की आवश्यकता नहीं पड़ती, बल्कि वह सीखने के लिए पूर्ण रूप से स्वतन्त्र होता है, उसके द्वारा ज्ञान तथा दक्षता प्राप्त करने की प्रक्रिया स्वयं अपने मस्तिष्क द्वारा संचालित की जाती है। समाज में होने वाले विभिन्न कार्यो का अध्ययन वह भली भांति कारताह है तथा समाज से उसे बहुत कुछ प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप से मिल जाता।

सीखना मानव में मनोविज्ञानिक प्रक्रिया मानी जाती है। मनोविज्ञान के अन्तर्गत सीखने की प्रक्रिया का विशेष रूप से ध्यान दिया जाता है। सीखना विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों से भी सम्बन्धित होता है। सीखना विभिन्न प्रकार के परिवर्तनों से प्रभावित होने के कारण व्यक्ति में विभिन्न समस्याओं को उत्पन्न करने वाला माना जाता है। जैसे-जैसे व्यक्ति को किसी विषय का अनुभव होता रहता है, उसकी सीखने की प्रक्रिया में भी उसी के अनुरूप विकास होता जाता है।

सीखना व्यक्ति के व्यक्तित्व के निर्धारण में विशेष योगदान प्रदान करती है। व्यक्ति जो कुछ सीखता है उसे अपने व्यवहार का अंग बनाता है, उसके व्यवहार के आधार पर ही मनुष्य द्वारा उसका व्यक्तित्व निर्धारित किया जाता है। मनुष्य अपने जीवन में किसी न किसी व्यवसाय को

अवश्य ही अपनाता है, यह व्यवसाय उसके जीवन में उसका विशेष सहयोग देता है। जीवन निर्वाह करने क लिए भी उसे व्यवसाय का अध्ययन किया जाना नितान्त आवश्यक है। इसी प्रकार पर्यावरण के प्रभावानुकूल भी व्यक्ति की सीखने की प्रक्रिया प्रभावित मानी जाती है।

जो व्यक्ति इस संसार में पैदा हुआ है उसके जीवन के साथ सीखने की प्रक्रिया अवश्य ही रहती है। वह अपने जीवन में विभिन्न प्रकार के आचरणों को अपनाता है और सीखता है। शिक्षा के क्षेत्र में सीखने की प्रक्रिया छात्रों के द्वारा की जाती है। व्यक्ति के जीवन में उत्पन्न होने वाली विभिन्न प्रकार की परिस्थितियों के परिणामस्वरूप भी उसके सीखने की प्रक्रिया पर प्रभाव पड़ता है। अत: यह स्पष्ट है कि सीखना मनुष्य में निरन्तर चलने वाली प्रक्रिया है जो उसके होश सम्भालने के साथ प्रारम्भ होकर उसके साथ जीवन पर्यन्त तक चलती रहती है।

सीखने के नियम

किसी भी विषय को एकदम पूर्णरूपेण नहीं सीखा जा सकता। क्योंकि सीखना एक सहज प्रक्रिया है। सीखना व्यक्ति के लिए तीव्रता के स्थान पर धीमी गति को अधिक प्रोत्साहन देती है। यदि किसी व्यक्ति को विषय वस्तु का पूर्ण ज्ञान एक साथ प्रदान कर दिया जाता है तो वह ज्ञान उसमें स्थाई ज्ञान नहीं माना जा सकता। क्योंकि एक साथ वह इतनी सारी प्रक्रियाएं नहीं कर सकता। पहले किसी भी विषय के प्रति कुछ नियमों का निर्माण किया जाता है, उससे नौसीखियों को परिचित कराया जाता है तथा उसके पश्चात् विषय के सम्बन्ध में तैयार की जाती है। यह तैयारी उन नियमों को ध्यान में रखकर की जाती है। सीखने के सम्बन्ध में वैसे तो अनेक नियम प्रचलित है परन्तु उनमें से आवश्यक नियमों का उल्लेख निम्नलिखित प्रकार से किया जा सकता है:-

(क) तैयारी का नियम, (ख) अभ्यास का नियम तथा (ग) प्रभाव का नियम, इनका उल्लेख निम्नलिखित प्रकार से किया जा रहा है:-

(क) तैयारी का नियम- यदि किसी व्यक्ति को विषय का

Scanned with CamScanner

अध्ययन करने के लिए तैयार किया जाता है तो इससे उसकी सीखने की प्रक्रिया विशेष रूप से प्रभावित होती है। वह विषयवस्तु का ज्ञान भली भांति प्राप्त कर सकता है। इसके विपरीत यदि किसी व्यक्ति को सीखने के लिए तैयार नहीं किया जाता तो इससे उसके समक्ष कुछ ऐसी परिस्थितियां उत्पन्न हो जाती है जिनके कारण वह अपना विकास नहीं कर पाता तथा उस विषय के सम्बन्ध में अपना पूर्ण योग्यता नहीं दिखा पाता। परिणामस्वरूप उसे कार्यो में विफलता ही प्राप्त होती है। तैयारी की स्थिति एवं योग्यता को पूर्ण रूप से सीखने के पश्चात् ही बालक को खेल के अन्य नियमों से अवगत कराया जाना चाहिए।

तैयारी व्यक्ति की शारीरिक, मानसिक एवं बौद्धिक शक्ति को प्रभावित करने वाले होते है। इससे उसमें शारीरिक तथा मानसिक दोनों रूप से अपना ध्यान किसी विशेष विषय में लगाने की कला का विकास होता है। वह वह एकाग्रचित हो निर्धारित लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए कार्यरत रहता है। तैयारी का नियम न केवल विद्यालीय शिक्षा के लिए ही प्रयुक्त की जा सकती है, बल्कि इसका प्रयोग अन्य शिक्षाओं का ज्ञान प्राप्त करने के लिए भी किया जा सकता है। यह किसी भी कार्य को करने की सफलता के लिए आवश्यक तत्व माना जाता है।

(ख) अभ्यास का नियम- यह माना जाता है कि जिस विषय का व्यक्ति बार-बार अभ्यास करता है उस विषय में उसे विशेष पारंगता प्राप्त होती है। अर्थात् जिस विषय के सम्बन्ध में बुद्धि को एकाग्रचित करता है उसमें उसे विशेष रूप से सफलता प्राप्त होती है। किसी भी कार्य में पूर्णता प्राप्त करने के लिए उसका निरन्तर अभ्यास किया जाना लाभदायक माना जाता है।

इस नियम का उपयोग आसान विषयों के साथ-साथ जटिल विषयों के सम्बन्ध में भी किया जा सकता है। इस नियम का उपयोग वर्तमान में विद्यालयों से लेकर खेल के मैदान तक किया जा रहा है। विद्यालय में छात्रों को शिक्षा प्रदान करने की जिम्मेदारी शिक्षक की मानी जाती है।

शिक्षक छात्रों में समान रूप से शिक्षा प्रदान करता है। इस समय कक्षा में अनेक छात्र विषय वस्तु को सुगमता से सीख जाते है तथा कई छात्रों को ज्ञान प्राप्त करने में कठिनाई उत्पन्न होती है। यह कठिनाई उनके सीखने में बाधक है। इस बाधा का समाधान करने के लिए शिक्षक द्वारा विषय का बार-बार अध्ययन कराया जाता है। वह कक्षा में पिछड़े छात्रों के समक्ष विषय का बार-बार पाठन करता है, इससे छात्रों में पाठ्यक्रम के सम्बन्ध में विशेष अनुभव उत्पन्न हो जाता है। वह विषय को पूर्णत:ः समझकर उसमें विद्यमान शिक्षा का उपयोग कर पाने में सक्षमता प्राप्त करते है।

शिक्षा के क्षेत्र के अनुरूप ही खेल के सम्बन्ध में भी सीखना अनुभव पर आधारित माना जाता है। खिलाड़ियों को कोच के द्वारा एक कौशल का बार-बार ज्ञान प्रदान किया जाता है। इससे उनमें उस कौशल के सम्बन्ध में अनुभव प्राप्त होता है। अत: यह स्पष्ट है कि करत-करत अभ्यास के जड़मति होत सुजान वाली प्रक्रिया छात्रों एवं खिलाड़ियों को विशेष रूप से प्रभावित करती है। अभ्यास के द्वारा व्यक्ति कठिन-से-कठिन कार्यो को भी करने से नहीं घबराता तथा वह तालमेल के साथ अध्ययन करता हुआ विषय वस्तु में उन्नति प्राप्त करता है। अत: यह स्पष्ट हो जाता है कि सीखने को अभ्यास भी विशेष रूप से प्रभावित करता है।

(ग) प्रभाव का नियम- इस नियम के सबसे बड़े समर्थक थर्नाडाइक माने जाते है। उन्होंने प्रभावों के सम्बन्ध जो कुछ भी व्यक्त किया उसे निम्नलिखित प्रकार से व्यक्त किया जा रहा है-

1. उन्होंने सर्वप्रथम यह व्यक्त किया कि जो कार्य छात्र व्यक्ति संतोष के साथ सीख जाता है उस अनुभव को वह खीझ के द्वारा सीखने में असमर्थ रहता है। जो छात्र शिक्षा के सिद्धान्तों एवं नियमों को भली भांति खुशीपूर्वक सीखने की कोशिश करता है वह बालक विषय से पूर्ण रूप से परिचित हो पाता है। खुशी का सम्बन्ध संतोष से माना जाता है, व्यक्ति में यदि संतोष भावना विद्यमान है और वह कार्य का ज्ञान करने में खुशी से उसकी ओर उन्मुख होता है तो निश्चय ही वह उस विषय का

Scanned with CamScanner

आसानी से पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर पाता है।

2. बालक के द्वारा समाज से शिक्षा प्राप्त की जाती है। वह विभिन्न अनुभवों का ज्ञान समाज के व्यक्तियों के द्वारा किए जाने वाले व्यवहारों के आधार पर करने में समर्थवान रहता है। इससे उसमें विभिन्न प्रकार के अनुभवों का विकास होता रहता है। समय-समय पर समाज में होने वाले विभिन्न परिवर्तनों के कारण छात्र में विशेष प्रकार की रूचि उत्पन्न हो जाती है। वह समाज के प्रत्येक कार्यो को पूर्ण रूप से अपने जीवन में उतारने की कोशिश करता है परिणामस्वरूप उसका विकास गतिपूर्ण होने लग जाता है।

3. यह देखा जाता है जिस कार्य में बालक की रूचि होती है वह उस कार्य को करने तथा उसे सीखने के विशेष रूप से तत्पर रहता है। वह कार्य उसके लिए विशेष प्रकार से लाभदायक भी माना जाता है। यदि छात्र को किसी ऐसे विषय के सम्बन्ध में ज्ञान प्रदान करना शुरू कर दिया जाता है जो उसकी रूचि के अनुरूप नहीं है, तो इससे छात्र में उस कार्य के प्रति रूचि उत्पन्न नहीं होगी और न ही वह उस कार्य के सम्बन्ध में अपनी रूचि का विकास पूर्ण रूप से कर भी पाएगा। अत: यह अत्यन्त आवश्यक है कि बालक को उन्हीं विषयों को सीखने की ओर जोर देना चाहिए जो उनकी रूचि के अनुरूप हो।

रूचि का कार्य की गति से प्रत्यक्ष सम्बन्ध होता है। यदि छात्रों में कार्य के प्रति विशेष रूचि तथा लगन है तो निश्चय ही वह कार्य के प्रति विशेष रूप से उन्मुख होंगे और कार्य करने की उनकी गति का भी विकास हो जाएगा। सीखने की गति का विकास करने के लिए छात्रों को उनकी रूचि अनुरूप कार्य प्रदान किया जाए तथा उन्हें केवल उसी विषय के बारे में जानकारी प्रदान की जाए जिनमें उनकी विशिष्ट रूचि हो।

इसके अतिरिक्त यह भी कहना अनुचित नहीं होगा कि यदि खेल को बालकों के द्वारा खेल के अनुरूप ही लिया जाए तो उनमें कौशलों का अधि

क विकास होने की सम्भावना होती है। छात्र को सीखने के लिए सदा तत्पर रहना चाहिए, कोई भी विषय उसे उन्नति के मार्गो तक पहुंचा सकता है, यदि वह उनमें रूचि उत्पन्न करता रहे।

गामक (मोटर) सिखलाई के सिद्धान्त

गामक (मोटर) सिखलाई के सिद्धान्तों को निम्नलिखित प्रकार से विभाजित किया जा सकता है:-

(क) परिपक्वता- परिपक्वता को मनोविज्ञानिक वृद्धि कहा जाता है। यह किसी भी प्रकार के प्रशिक्षण से जुड़ी नहीं होती। यह व्यक्ति के भीतरी गुणों के कारण उत्पन्न होने वाली मानी जाती है। जिस स्तर की व्यक्ति में योग्यता है यदि मोटर कुशलता का स्तर उसके साथ वैसा ही रखा जाता है तो निश्चय ही व्यक्ति को मोटर सिखलाई में सुविधा प्रतीत होती है। यह मनुष्य की बुद्धि से भी प्रभावित मानी जाती है। व्यक्ति की तत्परता जिस विषय में देखी जाती है उसी विषय की ओर उसे अग्रसर किया जाना चाहिए तभी वह विकास कर सकेगा और कार्य को तत्परता से भी सीख पाएगा।

(ख) सीखने की आवश्यकता- यदि व्यक्ति के द्वारा किसी विषय का ज्ञान प्राप्त करना जरूरी समझा जाता है तो निश्चय ही वह उस विषय के प्रति विशेष झुकेगा और उसके द्वारा वह विषय आसानी से सीखा जा सकेगा। इसी प्रकार यदि व्यक्ति को मोटर सिखलाई में रूचि उत्पन्न होती है तो वह निश्चय मोटर सिखलाई सीख सकेगा। क्योंकि जब तक व्यक्ति में सीखने की इच्छा जागृत नहीं होती है तब तक व्यक्ति किसी भी कार्य का ज्ञान प्राप्त नहीं कर पाता। यदि वह किसी विषय के प्रति सजग हो जाता है तो निश्चय ही वह उसे सीख जाता है।

(ग) स्नायु तंत्र (Nervous System) का ज्ञान- मोटर सिखलाई सीखने के लिए व्यक्ति अपने स्नायुतंत्र का विशेष उपयोग करता है। यह उसके स्नायु तंत्र द्वारा चलने वाली एक जटिल प्रक्रिया के रूप में भी मानी जाती है। स्नायु तंत्र के द्वारा ही उसमें कार्य को सीखने की इच्छा जागृत

Scanned with CamScanner

होती है तथा इसी के आधार पर वह जटिल कार्यों को करने में भी सक्षमता प्राप्त करता है। अत: व्यक्ति को अपने स्नायु तंत्र का ज्ञान होना अति आवश्यक माना जाता है।

(घ) व्यक्तिगत भेद- जिस प्रकार कोई दो व्यक्ति भी हाव-भाव से एक समान नहीं होता और न ही उनमें कार्य के आधार पर भी भिन्नता पाई जाती है उसी प्रकार मोटर सिखलाई की योग्यताएं भी उनमें भिन्न-भिन्न पाई जाती है। यही कारण है कि उनमें मोटर सिखलाई के सम्बन्ध में बहुत भिन्नता विद्यमान रहती है। यदि व्यक्ति को उसकी योग्यता के अनुरूप मोटर चलाना सिखाया जाता है तो वह निश्चय ही मोटर सिखलाई में विशेष प्रकार की उन्नति पहाप्त करता है। इसलिए योग्यतानुसार व्यक्तियों को मोटर सिखलाई कराई जाए।

(ङ) हुनर का मेकेनिकल ज्ञान- मेकेनिकल ज्ञान के अन्दर नियम, गुरूत्व, लीवर का ज्ञान आदि आता है। यदि बालकों को यह ज्ञान मोटर कुशलता के बारे में पहले ही दे दिया जाता है तो वे इनका ज्ञान प्राप्त कर कम से कम प्रयत्न करते हैं और अधिक से अधिक दक्षता प्राप्त करके अपने हुनर को सीखते हैं।

(च) उद्देश्यों के बारे में सूचना- किसी भी कार्य को करने के लिए उसके उद्देश्यों की यदि सूचना दे दी जाए और लक्ष्यों को सीखने वाले छात्रों के समक्ष एकदम स्पष्ट रखा जाए तो निश्चय ही वह अपनी पूर्ण लगन से उद्देश्यों की प्राप्ति करते है और कार्यों की सफलता के लिए उनका प्रदर्शन भी सफल होता है। अत: मोटर सीखने से पूर्व छात्रों को उद्देश्यों के बारे में सूचना दे देनी चाहिए। ताकि वह लक्ष्यों को पहचाने और उनसे प्रेरणा प्राप्त करके कार्य करने को आतुर रहे।

(छ) मानसिक रिहर्सल- अभ्यास करने को रिहर्सल कहा जाता है। यदि किसी व्यक्ति द्वारा किसी जटिल कार्य के लिए भी प्रयास किया जाता है तो वह निश्चय ही उस कार्य में भी विशेष उन्नति प्राप्त करता है। अभ्यास द्वारा किसी भी जटिल कार्य को आसानी से किया जा सकता

है। इसी को मानसिक रिहर्सल भी कहा जाता है। सीखे जाने वाले हुनरों का यदि अभ्यास किया जाता है तो निश्चय ही उनमें स्थाईपन लाया जा सकता है। अभ्यास के आधार पर ही अनेक प्रकार की जटिल प्रक्रियाओं को सीखा जा सकता है। इसी प्रकार मोटर सिखलाई में भी सीखने वाले को निरन्तर अभ्यास करते रहना चाहिए ताकि वह मोटर चलाना सीख जाने के पश्चात् उसे कभी न भूले।

(झ) मॉडल की नकल- मोटर सीखते समय यह अनुभव किया गया है कि यदि छात्रों द्वारा किसी मॉडल को आदर्श बनाया जाता है और उससे अपने प्रशिक्षण की तुलना की जाती है। तो निश्चय ही वह अपने द्वारा की जाने वाली विभिन्न भूलों एवं त्रुटियों बच सकते हैं। वह अपने द्वारा की जाने वाली विभिन्न गलतियों को नोट करके उनका बार-बार अभ्यास करते हैं और उन गलतियों को अभ्यास द्वारा सुधारने की कोशिश करते है। अत: मॉडल को आदर्श मानकर भी मोटर कुशलता को सीखा जा सकता है।

(ञ) समग्रता से सीखना- यह माना जा चुका है कि यदि किसी कार्य को व्यक्ति अकेला सीखता है तो वह उसके लिए इतना सफल नहीं होता, जितना कि वह उसके लिए समूह में सीखना होता है। समूह में रहकर व्यक्ति आपसी विचार विमर्श करके और समूह चर्चा के द्वारा विषय से सम्बन्धित ज्ञान को बढ़ा सकता है। यह ज्ञान उसके लिए अधिक देर तक स्थाई रहने वाला माना जाता है। समूह में विभिन्न प्रकार की योग्यता वाले छात्रों को देखा जाता है। उन सभी बालकों में अपनी-अपनी कुछ विशिष्ट क्षमताएं रहती है। वह उन क्षमताओं के अनुरूप ही कार्य करते हैं और मोटर सिखलाई में भी क्षमतानुसार ही छात्र ग्रहण करते है। यदि छात्रों द्वारा अपनी सुविधानुसार कार्य को बांट लिया जाता है और वह मोटर सिखलाई के प्रत्येक अंश को अपने अन्दर विकसित करते है, तथा समूह में उनकी चर्चा करते है, इससे छात्रों को विशेष रूप से ज्ञान प्राप्त होता है।

Scanned with CamScanner

(ट) दोहराई- यदि किसी विषय वस्तु को केवल मानसिक रूप से ही दोहरा लिया जाता है और उसे व्यवहारिक रूप नहीं दोहराया जाता तो इससे छात्रों में उस कार्य के प्रति स्थाई ज्ञान नहीं माना जा सकता। क्योंकि किसी भी विषय के सम्बन्ध में केवल सैद्धान्तिक ज्ञान ही पर्याप्त नहीं माना जाता उसके लिए व्यावहारिक ज्ञान होना भी अत्यन्त आवश्यक है। और मोटर सिखलाई में तो सब कुछ व्यावहारिक रूप से ही किया जाता है। अत: यदि मोटर सिखलाई को और भी अधिक सुगम बनाना है और उसमें निपुणता प्राप्त करनी है तो इसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि मोटर सीखते समय उसकी दोहराई अवश्य कर लेनी चाहिए ताकि उसका अध्ययन बाद में भी किया जा सके।

(ठ) वृद्धि- किसी कार्य में वृद्धि प्राप्त करने लिए पहले कार्य से सम्बन्धित आसान तथ्यों को सीखा जाता है उसके पश्चात् अन्य जटिल कार्यो की ओर ध्यान दिया जाता है। यदि पहले ही जटिल कार्यों की ओर बल दिया जाता है तो इससे कार्यो को भली भांति नहीं सीखा जा सकता। अत: मोटर सिखलाई में भी इसी बात का ध्यान रखना चाहिए कि पहले आसान कार्यो को सीखा जाए उसके पश्चात् मुश्किल कार्यो की ओर बल दिया जाए। यही मोटर सिखलाई के लिए विशेष सिद्धान्त माना जाता है। आसान से कठिन की ओर चलने के कारण शिक्षार्थी द्वारा आसानी से मोटर सिखलाई का कार्य सीख लिया जाता है। अत: मोटर सीखने के लिए तथा उसमें वृद्धि करने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि व्यक्ति के द्वारा आसान से कठिन की ओर बढ़ा जाए।

(क्ष) गति सही होना तथा ताल और सामंजस्य स्थापित करना- मोटर सीखते समय यदि गति की ओर ध्यान दिया जाए और उसे अपनी योग्यतानुसार ही बढ़ाया जाए तो इससे विशेष लाभ प्राप्त हो सकता है। परन्तु इसके विपरीत यदि मोटर सिखलाई में नौसीखिए द्वारा गति एवं रफ्तार तेजी से पकड़ ली जाए, तो इससे सिखलाई में जरूर ही कई परेशानियों का सामना करना पड़ सकता है।

नौसीखियां इनता सक्षम नही होता कि वह गति पर नियन्त्रण कर सके या उसके द्वारा मोटर पर पूर्ण रूप से नियन्यत्रण पाया जा सके। अत: उसके लिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि वह धीरे-धीरे गति में सुधार करें। जैसे-जैसे उसे मोटर सीखने का अनुभव प्राप्त होता रहे वैसे-वैसे वह गति में बढ़ोत्तरी कर सकता है। यह गति सीमा एक निर्धारित सीमा तक ही जा सकती है। मोटर के साथ ताल एवं शरीर के साथ सांमजस्य स्थापित कर लिया जाता है तो निश्चय ही मोटर सीखने में आसानी रहती हैं मोटर सिखलाई में केवल गति पर ही ध्यान नहीं दिया जाता इसमें शरीर और गाड़ी में विद्यमान सांमजस्य को भी स्थापित करने की ओर ध्यान दिया जाता है। बेलेंस बन जाने के बाद मोटर को चलाने में आसानी हो जाती है।

(ढ) फीडबैक- फीटबैक का प्रयोग सीखने में की जाने वाली विभिन्न प्रकार की त्रुटियों को ठीक करने के लिए किया जाता है। व्यक्ति के द्वारा सीखने में विभिन्न प्रकार की गलतियां की जाती है। यह सर्वमान्य सिद्धान्त माना जाता है कि जो व्यक्ति सीखेगा उसके द्वारा अवश्य ही गलतियां भी की जाएगी। गलतियों के आधार पर ही सीखा जाता है। सीखने वाला गलतियों का सुधार करता है और भविष्य में उसके प्रदर्शन पर भी इसका गहरा प्रभाव माना जाता है। इसी प्रकार यह भी अत्यन्त आवश्यक हो जाता है कि जो व्यक्ति मोटर सीख रहा है, उसमें होने वाली त्रुटियों को समझकर उन्हें दुबारा न दोहराने के लिए उसके द्वारा फीडबैक किया जाए। इसके द्वारा गलतियों का सुधार ही किया जाता है।

(ण) स्वयं का मूल्यांकन- जब व्यक्ति के द्वारा अपने आप का मूल्यांकन कर लिया जाता है और जब वह यह जान जाता है कि उसमें कितनी क्षमता है और उसके द्वारा कहां पर और क्यों गलतियां की जाती है तो निश्चय ही वह अपने द्वारा की जाने वाली विभिन्न त्रुटियों का ज्ञान प्राप्त कर उन्हें ठीक करने की कोशिश करता है। उसके द्वारा की जाने वाली गलतियों में सुधार कर लिया जाता है और आसानी से वह विभिन्न प्रकार के जटिल कार्यों को भी सुगमता से कर पाता है।

Scanned with CamScanner

इसी प्रकार यदि मोटर सिखलाई को सुदृढ़ बनाने के लिए छात्रों द्वारा स्वयं द्वारा किए जाने वाले प्रदर्शन का मूल्यांकन किया जाता है। इससे न केवल वह अपनी योग्यताओं के बारे में ज्ञान प्राप्त करते है बल्कि इसके द्वारा उन्हें अपने द्वारा की जाने वाली त्रुटियों के बारे में भी पता चलता है और वह भविष्य में उन्हें नही करते। अत: स्वयं का मूल्यांकन करना मोटर सिखलाई में सहायक सिद्ध हो सकता है।

उपरोक्त बिन्दुओं का अध्ययन करने से मोटर सिखलाई के सिद्धान्तों का ज्ञान प्राप्त होता है तथा यह भी पता चलता है कि किस प्रकार व्यक्ति द्वारा मोटर चलाने की विधि को सीखा जा सकता है और उसमें आने वाली त्रुटियों में सुधार करने के लिए यह प्रयत्न कर सकता है।

मोटर कुशलता सिखलाई की प्रकृति
(Nature of Motor Learning)

मनोविज्ञानिकों के द्वारा सीखने के लिए ढूंढे जाने वाले विभिन्न उपायों में से मोटर सिखलाई को विशेष महत्व दिया गया है। यह पूर्ण रूप से मनोवैज्ञानिक विधि मानी जाती है। इसका सम्बन्ध व्यक्ति के स्नायु गतिविधियों के साथ माना जाता है। इसमें व्यक्ति के उच्च स्नायु ज्ञान की जरूरत पड़ती है। व्यक्ति के द्वारा जो भी कार्य किए जाते है जैसे- नाचना, हंसना, चलना बोलना आदि सभी में उसके स्नायु द्वारा उसका साथ दिया जाता है अथवा यह सभी उसके स्नायुओं के द्वारा ही किए जाते हैं।

व्यक्ति में किसी विषय को सीखने के कितने स्किल है अथवा उसकी विषय को सीखने की कितनी योग्यता है, यह मोटर कुशलता के द्वारा ही बताया जाता है। व्यक्ति के द्वारा प्रत्येक क्षण किए जाने वाले विभिन्न कार्यों के बारे में भी मोटर कुशलता द्वारा ही उसके कार्यों का मूल्यांकन किया जाता है। व्यक्ति को जब किसी कार्य के लिए अवसर प्रदान किया जाता है और यह कार्य अक्मात होता है तो इससे व्यक्ति को अपने स्वयं की बुद्धि का उपयोग करना पड़ता है। वह अपनी योग्यता के अनुरूप ही कार्य करता है। उसमें जितनी क्षमता होती है वह उसी के

अनुरूप कार्य करता है। इसी प्रकार जब तक बालक के समक्ष सीखने के नवीन अवसरों को नहीं रखा जाता है तब तक बालक के द्वारा अपनी बुद्धि का उपयोग नहीं किया जाएगा परिणामस्वरूप उसकी क्षमता का विकास नहीं होगा। बालक की नाड़ी विकास के लिए उसे नित दिन कार्य करने के नवीन अवसर प्रदान करने चाहिए। उन अवसरों की उपस्थिति में ही वह योग्यता को प्रस्तुत करता है और अपनी क्षमता का विकास भी करता है।

व्यक्ति को मोटर कुशलता में प्रभावी एवं पूर्ण बनने के लिए कुछ आवश्यक शर्तो से होकर गुजरना पड़ता है तभी उसमें मोटर कुशलता का विकास होता है। इसके लिए उसके शरीर में लचीलापन होना चाहिए, पेशिय शक्ति का विकास होना चाहिए, अनुकरण करने की आदत का विकास होना चाहिए, एकाग्रचित्त होना चाहिए। इन सभी के आधार पर उसमें मोटर कुशलता के गुण देखने को मिल सकते हैं। यह सभी उसमें मोटर कुशलता लाने वाले माने जाते है। समन्वय, सन्तुलन आदि के आधार पर भी मोटर कुशलता को सीखा जाता है। व्यक्ति के द्वारा सोची जाने वाली विभिन्न मोटर कुशलताओं समस्याओं का समाधान करने के लिए विशेष प्रकार के कार्य किए जा सकते है।

मोटर कुशलता उसी प्रकार व्यक्ति के व्यक्तित्व को सुधारने का कार्य करती है, जिस प्रकार जुबानी कुशलता के द्वारा व्यक्ति अपने अन्दर विभिन्न प्रकार की कुशलताओं का विकास करता है। यह सभी कुशलाएं उसके व्यक्तित्व का विकास करने के लिए विशेष रूप से लाभदायक मानी जाती है। इनके द्वारा व्यक्ति में बिना हिचक अपने भावों की अभिव्यक्ति करने की क्षमता का विकास होता है। उसके भीतर जितने भी भाव विद्यमान रहते है वह उन सभी को व्यक्त कर सकता है। यह उसके व्यक्तित्व का सर्वांगीण विकास करने के लिए भी विशेष रूप से लाभदायक माना जाता है। व्यक्ति में अच्छी स्नायु कुशलता हो तो वह शैक्षणिक सामाजिक, वैचारिक तथा बौद्धिक क्षमता का विकास होता है। लोगों के द्वारा विभिन्न प्रकार के कार्यों एवं खेलों में भाग लिया जाता है और वह अपनी क्षमता का विकास करते

Scanned with CamScanner

4

व्यक्तित्व
(Personality)

Unit III

इस बात को सभी स्वीकार करते हैं कि शिक्षा के उद्देश्य मनुष्य के व्यक्तित्व को सम्पूर्ण और सर्वांगीण विकास है। शिक्षा के इस उद्देश्य पर विशेष जोर देने की बड़ी आवश्यकता है परन्तु हम देखते हैं कि विद्यालय, पुस्तकों, परीक्षाओं, पाठ्यक्रम तथा विधियों, पुस्तकालयों एवं प्रयोगशालाओं के दैनिक व्यवहार के इतने ओत-प्रोत हैं कि उसे अपने उद्देश्य की सुध ही नहीं है। आचार्य पठन पाठन के काम में इतने व्यस्त और मस्त रहते हैं कि वे अनुभव ही नहीं कर पाते हैं कि जिस काम और सामग्री को उन्होंने प्रधानता दी है वह शिक्षा के अलक्षित उद्देश्य की पूर्ति के लिए केवल साधन मात्र ही है और विद्यार्थियों के व्यक्तित्व विकास तथा निमार्ण में कितनी सहायक होती है। अतः व्यक्तित्व क्या है इस पर विचार करना समीचीन रहेगा।

व्यक्तित्व का अर्थ

व्यक्तित्व का अर्थ व्यवस्थित मानसिक मन की सारी क्रिया और प्रतिक्रियाओं का संगठित समूह। हमारे शरीर, मन और चरित्र सभी का समावेश व्यक्तित्व में होता है। मनुष्य की संवेदनाएं, अनुभूतियां, मूल प्रवृत्तियां, उद्वेग, बुद्धि तथा विवेक मानसिक शक्तियां व्यक्तित्व के अंतर्गत हैं। इतना ही नहीं मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण दूसरों के सम्पर्क में अने से ही होता है औद दूसरों के सम्बन्ध से ही उसका विकास होता है अर्थात् व्यक्ति के व्यक्तित्व का अधिक भाग सामाजिक है। व्यक्तित्व अनेक प्रकार की शारीरिक और मानसिक शक्तियों के संगठित समूह का नाम है। इन शक्तियों को संगठित समूह का नाम है। इन शक्तियों को संगठित व व्यवस्थित रूप से विकसित करने से व्यक्तित्व का विकास होता है।

Scanned with CamScanner

मनुष्य की उत्पत्ति के अध्ययन हेतु उसे विकास की कहानी से परिचित होना आवश्यक है। यह विकास शारीरिक क्रियाओं की आवश्यकता को इंगित करता है। विकास का अर्थ किसी जाति अथवा प्राणी विशेष के उस विकास से तात्पर्य रखता है जिसके विकास काल में अनेक परिवर्तन होते हैं तथा प्राणियों के आकार तथा शारीरिक-क्रियाविज्ञान सम्बन्धी विशेषताएँ अर्जित की जाती हैं। इन्हीं विशेषताओं के द्वारा किसी विशेष जाति अथवा प्राणी वर्ग के गुण स्पष्ट होते हैं। मानव विकास के अध्ययन से यह स्पष्ट होता है कि मनुष्य के जीवन में निम्न रूप से विकसित होकर बड़ी उन्नति की है।

यह विकास क्रमशः हुआ है न कि यकायक। इस बात का स्पष्ट प्रमाण उपलब्ध है कि मानव विकास कई युगों में हुआ है। प्रथम युग में केवल एक कोशिका वाले पौधे तथा प्राणी थे। इसके बाद के युग में ऐसे जीव विकसित हुए जिनके रीढ़ की हड्डी ही नहीं होती थी। इसके अनन्तरन वह युग आया जिसमें जीवित प्राणी के रूप में मछलियाँ, जल-स्थल दोनों में रहने वाले जीव, रेंगने वाले जीव, बच्चों को दूध पिलाने वाले जीव, पक्षी एवं होमोसैपियन्स का विकास हुआ। सबसे अन्त में मानव के रूप में प्राणी का विकास हुआ। इस विकास के क्रम में शारीरिक-शिक्षा का उद्देश्य जीवन-स्तर को उन्नत करना चाहिए। मनुष्य को सदा बैठे हुए अथवा लेटे हुए जीवन व्यतीत नहीं करना चाहिए। वरन् सक्रिय होते हुए शरीर के विभिन्न अवयवों को व्यायाम देना तथा घर के बाहर खेतों-खलिहानों मैदानों तथा कारखानों में जीवन को कार्यरत रखना चाहिए। आज के युवकों को प्रशिक्षित करने के लिए प्रकृति की विधियों का उपयोग किया जाए। प्राचीन-काल में भी मनुष्य अपने भोजन को उपार्जित करता था, अपने आवास की व्यवस्था करता था और चलकर, दौड़कर, फुदक कर, प्रक्षेपण कर, लटक कर, चढ़कर-उतरकर अपने प्रतिकूल वातावरण से अपनी रक्षा करता था। मानव-विकास के एक लम्बे इतिहास में उपर्युक्त क्रियाएँ मनुष्य के लिए बड़ी प्रमुख एवं महत्त्वपूर्ण सिद्ध हुई है। वास्तव में ये वंशानुक्रम के अंश हैं।

मनुष्य के खेल, नृत्य तथा अन्य शारीरिक क्रियाएँ इतनी पुरानी हैं जितनी की मानव जाति। उदाहरणार्थ–आधुनिक बॉस्केट-बाल, दौड़ना-फेंकना और हमारा आज का नृत्य केवल चलना, फुदकना, अंगों का परिचालन एवं मरोड़ना और सन्तुलन करना है। मनुष्य को चाहिए कि अपने जीवन-स्तर को उच्चतर विकसित करने के लिए इन्हीं मूल-क्रियाओं को आधार माने। इन्हीं क्रियाओं से उसका शरीर सुदृढ़ होगा, आकार सुन्दर और गामक-शक्ति पर्याप्त।

व्यक्तित्व के प्रधान अंग निम्नलिखित हैं-

1. सामाजिकता।
2. चरित्र तथा मानसिक दृढ़ता।
3. उद्वेगात्मक जीवन।
4. बुद्धि।
5. व्यक्ति का रूप।

व्यक्तित्व के विशिष्ट तथ्य

व्यक्तित्व को परिभाषित करने में विद्वानों के दृष्टिकोण में भिन्नता पाई गई है। इस दृष्टिकोणों की भिन्नता में कुछ ऐसे तथ्य स्पष्ट हुए है, जिनसे व्यक्तित्व की प्रकृत्ति को समझने में सहायता मिलती है। यह तथ्य निम्नलिखित हैं-

1. गतिशीलता- व्यक्ति का व्यवहार निरन्तर बदलता रहता है। जिससे उसका व्यक्तित्व भी परिवर्तित होता है। यहां यह कहना उचित ही होगा कि व्यक्तित्व गतिशील होता है। कौन यहां तक विभिन्न परिस्थितियों में समायोजन स्थापित कर पाता है, यह उसके व्यक्तित्व की गतिशीलता पर आधारित होता है।

2. अपूर्वता- किन्हीं दो व्यक्तियों का व्यक्तित्व एक जैसा नहीं होता। उनमें भिन्नता पाई जाती है। प्रत्येक व्यक्ति का जीवन यापन तथा सामाजिक समायोजन अपने-अपने ढंग का होता है। वह अपने ढंग से सोचता है, व्यवहार करता है, प्रतिक्रिया करता है, विभिन्न समस्याओं का समाधान वह

Scanned with CamScanner

अपने ढंग से करता है।

3. सम्पूर्णता- व्यक्ति अपने आप में सम्पूर्णता लिए होता है। व्यकित की सभी क्रियाओं, प्रतिक्रियाओं से उसके व्यक्तित्व का ज्ञान होता है। व्यक्तित्व में व्यक्ति के व्यवहार के तीनों पक्ष ज्ञानात्मक, भावानात्मक और क्रियात्मक सम्मिलित होते हैं।

4. लक्ष्य निर्देशित- प्रत्येक व्यक्ति जीने के लिए अपना लक्ष्य निर्देशित करता है। उस लक्ष्य के अनुरूप ही उसकी जीवन शैली बन जाती है। उस लक्ष्य को पाने के लिए वह जो व्यवहार करता है उससे उसके व्यक्तित्व का ज्ञान होता है। व्यक्ति की अपनी समस्याओं को सुलझाने के तरीकों तथा उसके जीवन लक्ष्यों का अध्ययन करने के बाद ही उसके व्यक्तित्व के बारे में कुछ कहा जा सकता है।

5. आत्म चेतना- आत्म चेतना व्यक्तित्व के विकास में सहायक बनती हैं। जब तक व्यक्ति में आत्म चेतना जागृत नहीं होती, तब तक उसके व्यक्तित्व का विकास नहीं होता। आत्म चेतना द्वारा ही वह यह सोचता है कि वह क्या है तथा दूसरे उसके बारे में क्या सोचते हैं। इससे व्यक्ति अपने व्यवहार का मूल्यांकन करता है। आत्म चेतना द्वारा उसे अपनी कमजोरियों तथा सीमाओं का ज्ञान होता है। आत्म चेतना द्वारा वह अपनी समस्याओं का उचित समाधान खोज सकता है।

व्यक्ति का रूप characteristics

व्यक्ति के रूप के अन्तर्गत साधारणत: शरीर की बनावट, रूप, रंग और सजावट आती है। मनुष्य की ऊंचाई, नाटापन, दुबलापन का प्रभाव मनुष्य के व्यक्तित्व की कल्पना पर पड़ता है। यह स्वाभाविक है कि मनुष्य अपने शरीर की तुलना दूसरे के शरीर से करता है और वह चाहता है कि दूसरों से नीचा नहीं रहे। अतएव जब किसी मनुष्य का कोई अंग विकृत होता है तो उसके मन पर विशेष प्रभाव पड़ता है। अंगों के विकृत होने से आत्महीनता की मानसिक ग्रन्थी बन जाती है। इससे बुद्धि का विकास उसके उद्वेग, चरित्र तथा सामाजिकता एक विशेष प्रकार का रूप लेते हैं और उसकी क्रियाओं में आत्महीनता की झलक देखी जाती है। अत: प्रभावशाली

व्यक्तित्व के लिए ऊंचे व मजबूत तथा शारीरिक विकृत्तियों से रहित शरीर की आवश्यकता है।

शारीरिक विकृत्तियों से रहित शरीर निर्माण के लिए शारीरिक शिक्षा ही अचूक व सर्वसुलभ साधन है। इसके द्वारा ही व्यक्ति शरीर को स्वस्थ एवं प्रभावशाली बना सकता है अथवा यों कहे कि हाथी की शक्ति शेर की हिम्मत और लोमड़ी की चतुराई शारीरिक शिक्षा द्वारा ही प्राप्त की जा सकती है और इन गुणों से जीवन में सफलता आसानी से प्राप्त होती है।

शरीर आत्मा का मन्दिर है इसे स्वच्छ, शुद्ध व निरामय रखना आवश्यक ही नहीं, सफल जीवन के लिए अनिवार्य भी है। व्यक्ति के रूप के अन्तर्गत शरीर की सजावट भी आती है। व्यक्ति की पोशाक उसके सौन्दर्य वृद्धि में सहायक होती है। कारलाइल महोदय का कहना है कि नौ दर्जी मिलकर एक मनुष्य को बना देते हैं। भाव है कि कुरूप व्यक्ति भी सुन्दर वस्त्रों से प्रभावशाली दिखाई देने लगता है। व्यवहारिक जगत में हम देखते हैं कि व्यक्ति जब सामाजिक उत्सवों में जाता है तब वह अपने आपको प्रभावशाली दिखाने के लिए सुन्दर वस्त्र पहनता है। व्यक्ति के दूसरों के साथ बोलचाल तथा अन्य व्यवहार के ढंग भी उसके व्यक्तित्व निर्माण में सहायक हैं मधुरभाषी शीलवान् व्यक्ति सब स्थानों पर आदरणीय हैं। मनुष्य की बुद्धि उसके व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण अंग है। यद्यपि बुद्धि के गुण जन्मजात होते हैं, किन्तु बुद्धि का विकास प्रयत्न व शिक्षा पर निर्भर है। शरीर के विभिन्न अंगों का प्रयत्न द्वारा विकास किया जा सकता है। इसी तरह प्रयत्न से बुद्धि विकसित हो सकती है। बौद्धिक विकास के लिए शारीरिक शिक्षा के कार्यक्रम पूर्णरूप से सहायक होते हैं। शारीरिक शिक्षा प्रत्यक्ष रूप से मस्तिष्क का और अप्रत्यक्ष रूप से बुद्धि का विकास करती है। मनुष्य का ज्ञान उसकी बुद्धि पर निर्भर रहता है। विशेष प्रकार की रूचि का कारण बुद्धि होती है। व्यक्ति में जिस विषय को समझने की योग्यता नहीं होती है, उस विषय के प्रति उसे रूचि भी नहीं होती है। अत: यह स्पष्ट है कि व्यक्ति के मन का विकास अधिकतर उसकी बुद्धि के ऊपर निर्भर रहता है।

Scanned with CamScanner

व्यक्तित्व के आयाम

मनुष्य का व्यक्तित्व कई आयामों को मिलाकर बनाता है। यह आयाम व्यक्तित्व की शारीरिक, मानसिक, सामजिक, बौद्धिक एवं भावात्मक विशेषताओं को दर्शाते हैं। इन आयामों के बिना व्यक्तित्व को समझना कठिन है। यह आयाम निम्नलिखित हैं-

1. शारीरिक आयाम- शारीरिक व्यक्तित्व का पहला आयाम है। मनुष्य के शरीर को देखकर उसके व्यक्तित्व का अन्दाजा लगाया जाता है। परन्तु यह अन्दाजा गलत भी हो सकता है। ऊँचे, लम्बे, सुन्दर नैन-नक्श, चौड़ी छाती, गौर वर्ण, चमकीला चेहरा देखकर लोग उसकी ओर आकर्षित होते हैं परन्तु यह ध्यान नहीं देते कि उसके पास गुण हैं भी या नहीं। वहीं दुबले-पतले, सांवले रंग वाले, ठिगने कद के मनुष्य को देख कर लोग घृणित होते हैं चाहे उसमें कितने ही गुण क्यों न हो कहा जाता है कि स्वस्थ शरीर में स्वस्थ मन का वास होता है और जिसका शरीर एवं मन दोनों ही स्वस्थ रहेंगे तो उसका व्यक्तित्व अपने आप सुन्दर होगा।

कहा जाता है कि बच्चे की शरीर रचना वंशानुक्रम होती है। परन्तु यह पूर्ण सत्य नहीं है। यदि एक अच्छी डील-डोल वाले बच्चे को स्वस्थ वातावरण तथा पौष्टिक आहार प्राप्त नहीं होता तो वह अस्वस्थ रहता है, उसका शारीरिक विकास रूक जाता है। जिससे उसका व्यक्तित्व भी प्रभावित होता है। वहीं दूसरी ओर यदि एक भद्दी आकृति वाले बच्चे को स्वस्थ वातावरण तथा पौष्टिक आहार मिलता है तो उसका शरीर स्वस्थ रहता है। उसका शारीरिक विकास अच्छा होता है जो उसके व्यक्तित्व को प्रभावशाली बनाता है। इसलिए व्यक्तित्व केवल वंशागुनत विशेषताओं से ही नहीं अपितु वातावरण से भी प्रभावित होता है।

2. भावात्मक आयाम- भावनाएं मनुष्य के व्यक्तित्व का महत्वपूर्ण अंग है। व्यक्ति प्रत्येक कार्य भावना से प्रेरित होकर करता है। एक अच्छे व्यक्तित्व के लिए अपनी भावनाओं पर नियन्त्रण आवश्यक है। भावात्मक स्थिरता ही व्यक्ति के व्यक्तित्व को सुदृढ़, सुन्दर तथा प्रभावशाली बनाती है। मनुष्य का शरीर कितना भी सुन्दर एवं स्वस्थ क्यों न हो यदि उसमें

भावात्मक स्थिरता नहीं है तो उसके व्यक्तित्व को सन्तुलित नहीं कहा जा सकता। ऐसा व्यक्ति छोटी-छोटी खुशियों पर भी उछल पड़ता है तथा छोटे से दु:ख पर गम के सागर में डूब जाता है। एक अच्छे व्यक्तित्व वाला व्यक्ति अपनी भावनाओं पर नियन्त्रण रखता है। समाज में इज्जत प्राप्त करता है।

3. सामाजिक आयाम- मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। मनुष्य के व्यक्तित्व का निर्माण भी समाज में रह कर ही होता है। बच्चा जब छोटा होता है तो वह बहुत दुर्बल होता है। उसका मानवीकरण समाज के हाथों होता है। वह एक परिवार में उत्पन्न होता है, वहीं बड़ा होता है, रीत-रिवाज, परम्पराएं तथा मान्यताएं सीखता है। वह बड़ा होकर अपनी योग्यताओं का प्रयोग सामाज के विकास में करता है। अपने पूरे जीवन काल में वह विभिन्न सामाजिक परिस्थितियों से गुजरता है। उसके सामने अनेक समस्याएं आती हैं जिनका समाधान करने के लिए वह जो व्यवहार अपनाता है वह समाज से स्वीकृत होता है। व्यक्ति में कितने भी गुण क्यों ना हो अगर वह समाज विरोधी कार्य करता है तो समाज उसे कभी स्वीकार नहीं करता। व्यक्ति का व्यक्तित्व समाज द्वारा स्वीकृत होता है।

4. मानसिक आयाम- मानसिक आयाम के अन्तर्गत व्यक्ति की मानसिक तथा बौद्धिक क्रियाएं आती हैं। व्यक्ति क्या सोचता है, विचार करता है, उसकी तर्क शक्ति तथा उसके व्यवहार से उसके व्यक्तित्व को जाना जाता है। यदि किसी व्यक्ति के पास सुन्दर शरीर नहीं है पर उसका मन सुन्दर है, उसके पास मानसिक एवं बौद्धिक दोनों ही गुण हैं तो उसका व्यक्तित्व अपने आप ही प्रभावशाली बन जाता है। मानसिक रूप से दृढ़ तथा पर्याप्त बुद्धि से सम्पन्न व्यक्ति ही सामाजिक विकास में योगदान दे सकता है।

कहा जाता है कि व्यक्ति का मानसिक आयाम वंशानुगत होता है। बच्चे की आयु के साथ उसका शारीरिक एवं मानसिक आयाम वंशानुगत होता है। वातावरण बच्चे के मानसिक एवं बौद्धिक विकास को प्रभावित करता है। बच्चे की शरीर रचना कितनी भी अच्छी क्यों न हो यदि

Scanned with CamScanner

वातावरण अनुकूल न हो तो उसका उचित मानसिक एवं बौद्धिक विकास नहीं हो पाता। अत: चाहे मानसिक आयाम वंशानुगत क्यों ना हों पर उन पर वातावरण का बहुत प्रभाव पड़ता है।

व्यक्तित्व का मूल्यांकन

व्यक्तित्व एक अत्यन्त जटिल संज्ञा है। इसका आकार, विषय-वस्तु तथा संघटक व्यक्तिनिष्ठ भी हैं तथा वस्तुनिष्ठ भी। व्यक्तित्व के कुछ पक्ष स्थिर, अनापरिवर्तनीय हैं जबकि अन्य पक्ष गतिशील तथा परिवर्तनीय है। इसके अतिरिक्त व्यक्तित्व की संरचना के विषय में अभी तक मनोवैज्ञानिक एक मत नहीं हैं। यही कारण है कि व्यक्तित्व की परखा एक टेढ़ी खीर है। मनोवैज्ञानिकों ने अनेक साधन तथा विधियां खोज निकाली हैं जिनके माध्यम से व्यक्तित्व की संरचना तथा गतिशीलता को किसी सीमा तक जाना-पहचाना तथा जांचा-परखा जा सकता है।

1. ***रेटिंग स्केल***- इस विधि में व्यक्ति के व्यक्तित्व का मूल्यांकन निर्धारित रेटिंग-स्केल से किया जाता है। इनमें कुछ विशिष्ट गुणों को रेटिंग स्केल निर्धारित किया जाता है। फिर निर्णायक सम्बन्धित व्यक्ति की विशेषताओं का मूल्यांकन करता है। इसमें निर्णायक को बिना किसी पक्षपात एवं अपनी पसन्द, नापसन्द से ऊपर उठकर मूल्यांकन करना चाहिए।

2. ***प्रोजैक्ट विधि***- प्रोजैक्ट विधि को हिन्दी में प्रक्षेपण विधि कहते हैं। इस विधि से व्यक्ति के अवचेतन तक पहुंचने में सहायता मिलती है। अवचेतन मन व्यक्तित्व का अभिन्न अंग है। इस विधि में कुछ अर्थहीन एवं अस्पष्ट चित्रों, अधूरी चीजों तथा आकृत्तियों को व्यक्ति के सामने रखा जाता है। उन चीजों को देखकर व्यक्ति जो अनुक्रिया करता है वह उसके अवचेतन को प्रतिबिम्बित करती है और उसी के आधार पर उसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जाता है।

3. ***साक्षात्कार***- यह एक व्यक्तिनिष्ठ विधि है। किसी नौकरी तथा स्कूल में प्रवेश पाने के लिए साक्षात्कार लिया जाता है। परीक्षक प्रश्न पूछता है तथा प्रत्याशी उसका उत्तर देता है। प्रत्याशी के उत्तर, हाव-भाव तथा

शब्दावली के आधार उप उसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जाता है।

4. ***स्थिति परीक्षण***- व्यक्ति को किसी विशेष स्थिति में रखकर उसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन करना स्थिति परीक्षण कहा जाता है। इसी से मिलती-जुलती एक विधि है परफोरमेन्स विधि। जिसमें व्यक्ति को कोई काम देकर जिसके व्यक्तित्व का मूल्यांकन किया जाता है।

5. ***प्रश्नवली***- यह विधि वस्तुनिष्ठ है। इसका उपयोग व्यक्तियों तथा समूहों पर सरलता से किया जा सकता है। इसमें व्यक्ति के विचारों, भावानाओं तथा व्यवहारों से सम्बन्धित कुछ प्रश्न दिए जाते है जिनके आगे हां या नहीं, लिखा होता है। व्यक्ति को अपना उत्तर देने के लिए हां या नहीं, पर टिक लगाना होता है। उनके उत्तरों को उनके व्यक्तित्व की जानकारी हासिल की जा सकती है।

6. ***निरीक्षण विधि***- व्यक्ति के व्यक्तित्व की परख उसके व्यवहार से होती है। व्यक्ति के व्यवहार के निरीक्षण कर उसके व्यक्तित्व को जाना जा सकता हैं एक व्यक्ति के व्यवहार का निरीक्षण कई निरीक्षक कर सकते हैं। उन सभी निरीक्षकों के तथ्य को एकत्रित कर उसके व्यक्तित्व के बारे में बताया जा सकता है। यह निरीक्षण वस्तुनिष्ठ होना चाहिए। निरीक्षण के लिए कैमरा, टी.वी. तथा टेप-रिकार्डर का प्रयोग किया जाता है।

7. ***व्यक्ति इतिहास***- इस विधि द्वारा सम्बन्धित व्यक्ति के जीवन के विभिन्न पहलुओं को इकट्ठा किया जाता है जो उसकी वंशानुगत विशेषताओं तथा वातावरण से सम्बन्धित होते हैं।

व्यक्तित्व का निर्माण

व्यक्तित्व की परिभाषाओं का अध्ययन करने के पश्चात् विदित होगा कि व्यक्तित्व विकासशील है। जन्म से लेकर मृत्यु तक व्यक्तित्व का विकास होता है, परन्तु यह विकास, शारीरिक या बौद्धिक विकास की भांति एक रेखा के रूप में न होकर विभिन्न दिशाओं में होता हैं। उसमें समय-समय पर न मालूम कितने मोड़ और जटिलताएँ उत्पन्न होती रहती हैं। व्यक्तित्व के निर्माण में उन सभी प्रकार के विकासों के पारस्परिक

Scanned with CamScanner

5

अभिप्रेरणा
(Motivation)

मनोविज्ञान भी एक तरह का विज्ञान है जिसमें अभिप्रेरणा का अभिप्राय व्यवहार से है। व्यवहार मनोविज्ञान के अन्तर्गत आता है। अतः किसी भी प्रकार के व्यवहार की समीक्षा भी मनोविज्ञान का विषय है। व्यवहार, की समीक्षा करते समय जिस महत्वपूर्ण तथ्य का ज्ञान होना जरूरी है वह है अभिप्रेरणा। इसके लिए हमें और भी तथ्यों को ध्यान में रखना होगा जैसे आवश्यकता, प्रेरक व प्रेरणा। अभिप्रेरणा व्यवहार की वह विद्या है जिसके द्वारा व्यक्ति के कुछ करने के लिए प्रेरित, प्रोत्साहित व उत्तेजित किया जाता है। किसी व्यवहार के पीछे कई अभिप्रेरणा है या नहीं यह जानने के लिए हमें अभिप्रेरणा के व्यक्तित्व और सामूहिक पक्षों पर ध्यान देना होगा। परिस्थितियों तथा परिणामों के नियन्त्रण से व्यवहार की दिशा की प्रवृत्ति का तब तब बना रहता आवश्यक है जब तक उद्देश्य की पूर्ति न हो जाए।

उदाहरण के लिए एक मकड़ी का जाला हम तोड़ दे तब भी वह निरन्तर उसे बनाती रहती है। कौन सी एसी चीज उसे इतना कठिन कार्य करने की प्रेरित करती है? वह चीज और कुछ नहीं अभिप्रेरणा ही है। सभी व्यक्ति अपने-अपने कार्यों में इसलिए तत्पर है क्योंकि वह अपनी बुनियादी आवश्यकता तथ वांच्छित लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए अभिप्रेरित हैं।

रूचि तथा अभिप्रेरणा का गहरा सम्बन्ध है। रूचि सीखने का केन्द्रीय तत्व है तो अभिप्रेरणा इस तत्व का हिस्सा। क्रो एण्ड क्रो का कहना है अभिप्रेरणा सीखने में रूचि उत्पन्न करने के साथ सम्बन्धित है और इस सीमा तक सीखने की बुनियाद है।

इसी तरह सीखने और अभिप्रेरणा में भी गहरा सम्बन्ध है। कैली के अनुसार, "सीखने की प्रक्रिया प्रभावशाली व्यवस्था में अभिप्रेरणा एक

Scanned with CamScanner

केन्द्रीय तत्व है। हर प्रकार के सीखने में कोई न कोई अभिप्रेरणा अवश्य चाहिए।"

प्रेक्षणीय व्यवहार तथा इसका मानसिक प्रक्रमों तथा वातावरण की घटनाओं के साथ सम्बन्ध का क्रमबद्ध अध्ययन तथा व्याख्या हम मनोविज्ञान विषय के अन्तर्गत करते हैं। इस प्रसंग में व्यवहार एक अत्यन्त व्यापक संप्रत्यय का बोध कराता है जिसमें विविध प्रकार की अगणित अनुक्रियाएं सन्निहित हैं। ये अनुक्रियाएं या व्यवहार हम क्यों करते हैं? इस प्रश्न का उत्तर प्रारम्भ में मूल प्रवृत्तियों के रूप में दिया गया। आधुनिक मनोवैज्ञानिक मूलप्रवृत्तियों को किसी विशेष जाति की एक विशिष्ट और निश्चित प्रकार के व्यवहार करने की रीतियों के रूप में स्वीकार करते हैं जिन्हें प्राणी अपने वंशजों के जन्म के साथ ही प्राप्त करता है। मूल प्रवृत्ति के सिद्धान्त को मानने वालों जैसे मैकडूगल तथा फ्रायड आदि के अनुसार हमें दूसरों से सहानुभूति इसलिए होती है क्योंकि यह हमारी मूल प्रवृत्ति है। इसी प्रकार हम स्वच्छ इसलिए रहते हैं क्योंकि हममें स्वच्छता की मूलप्रवृत्ति होती है इत्यादि। बाद में यह पाया गया कि यदि ये मूल प्रवृत्तियाँ पशुओं में कुछ सीमा तक मिलती भी है तो मानवों में इसका सर्वथा अभाव होता है। फलतः मनोवैज्ञानिक विभिन्न व्यवहारों की व्याख्या के लिए कोई संचालक, निर्देशक तथा संगठक शक्ति ढूँढ़ने का प्रयास शुरू किये।

व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्वों का वर्गीकरण कई दृष्टिकोणों से या कई आधारों पर किया जा सकता है। प्रथम आधार पर एक ओर वे तत्व आते हैं जो व्यवहार को प्रारम्भ सक्रिय या अनुप्रेरित करते हैं और दूसरी ओर वे तत्व हैं जो एक बार प्रारम्भ, या सक्रिय हुए व्यवहार को दिशा देते हैं। पहले प्रकार के कारकों को अभिप्रेरणात्मक कारक कहा जा सकता है जिसमें अन्तर्नोद, प्रोत्साहन, अभिप्रेरणा, क्रिया वृत्तियाँ तथा संवेग आदि आते हैं। ये सभी व्यवहार को तरह-तरह से गतिशील करते हैं या संचालित करते हैं। दूसरे प्रकार के कारकों में मूलरूप से उद्दीपक- अनुक्रिया साहचर्यात्मक प्रवृत्तियाँ, आदत बल तथा संज्ञानात्मक अनुकृति आदि आते हैं जो बाह्य तथा आन्तरिक उद्दीपकों के साथ मिलकर यह तय करते हैं कि

प्राणी कौन सा व्यवहार करेगा या उसके व्यवहार की क्या दिशा होगी ? इन कारकों को उद्दीपक जन्य कारक कहा जा सकता है। इस वर्गीकरण से स्पष्ट है कि अभिप्रेरणात्मक कारक व्यवहार को गति देते हैं जबकि आदत बल तथा साहचर्यात्मक प्रवृत्तियाँ आदि उसे दिशा देती हैं। कुछ मनोवैज्ञानिकों की यह मान्यता है कि आदत बल तथा साहचर्यात्मक प्रवृत्तियाँ आदि उसे दिशा देती हैं। कुछ मनोवैज्ञानिकों की यह मान्यता है कि आदत बल आदि उद्दीपक के साथ मिलकर व्यवहार को दिशा देते हैं परन्तु अभिप्रेरणात्मक कारक, विशेषकर अर्न्तनोद तथा अनुप्रेरणाएं व्यवहार को गति देने के साथ-साथ उसे उपयुक्त दिशा भी देते हैं। कुछ मनोवैज्ञानिक यह मानते हैं कि अभिप्रेरणात्मक तत्व व्यवहार को केवल दिशा देते हैं और एक तीसरे प्रकार के कारक भी होते हैं जो गति और दिशा दोनों ही देते हैं।

व्यवहार को प्रभावित करने वाले तत्वों को एक अन्य आधार पर चार वर्गों में बांटा जाता है। व्यवहार को निर्धारित करने वाला पहला कारक है- उपलब्धता जिसका आशय यह है कि किसी उद्दीपक के उपस्थित या प्रस्तुत होने पर कौन सी क्रियाएं उपलब्ध हैं जिन्हें किया जा सकता है। भोजन का उद्दीपक उपस्थित रहने पर पिंजड़े में बन्द बिल्ली कुंजी लेकर ताला खोलकर वाहर जाने की क्रिया नहीं कर सकती। इसी प्रकार किसी छात्र को घर पर किसी विषय पर शंका होने पर वहां पर अध्यापक से समाधान प्राप्त करने की क्रिया नहीं कर सकता बल्कि वह उपलब्ध क्रियाओं में से ही कोई एक करेगा। घर में उपलब्ध पुस्तकें, नोट आदि देखेगा या सहपाठी (जो पास में रहता हो) से जाकर पूछेगा। व्यवहार को निर्धारित करने वाला दूसरा कारक प्रत्याशा है। उपलब्ध क्रियाओं में से जिसे करने से लक्ष्य मिलने की सबसे अधिक सम्भावना होती है उसे ही व्यक्ति करता है। लक्ष्य वस्तु में प्रोत्साहन मूल्य भी होता है जो व्यवहार का तीसरा निर्धारक है। यदि भूखा व्यक्ति प्रयास करके पानी तक पहुंचता है तो उससे उसकी भूख नहीं मिटती। कुछ वस्तुओं में घनात्मक मूल्य होते हैं तो कुछ में ऋणात्मक अर्थात् कुछ वस्तुओं को प्राप्त करने के लिए वह व्यवहार करता है तो कुछ से बचने के लिए प्रयास करता है। व्यवहार का चौथा निर्धारक है अभिप्रेरक

Scanned with CamScanner

या अनुप्रेरणा जो क्रिया को प्रारम्भ करने के लिए आवश्यक है। इसके अभाव में व्यक्ति सदा निष्क्रिय रहता है।

व्यवहार के निर्धारकों के अन्तर्गत सभी दृष्टिकोणों के मनोवैज्ञानिकों ने अभिप्रेरण तत्व को प्रचुर महत्व दिया है। व्यवहार के निर्धारक या कम से कम गतिप्रदायक के रूप में अभिप्रेरण को स्वीकारने का मुख्य लाभ यह हुआ कि यदि मैकडूगल ने 15 मूल प्रवृत्तियों और जेम्स ने 17 मूल प्रवृत्तियों के आधार पर असंख्य व्यवहारों की व्याख्या की थी तो अब असंख्य व्यवहारों की व्याख्या के लिए असंख्य अनुप्रेरणाएं उपलब्ध हो सकीं। अब तो अभिप्रेरक का महत्व सर्वत्र स्वीकारा जाने लगा है। किन्तु अभिप्रेरक का संप्रत्यय अभी भी बहुत अस्पष्ट स्थिति में है तथा मनोवैज्ञानिकों में एक जटिल विवाद का विषय बना हुआ है। इसकी व्याख्या के लिए अनेक सप्रत्ययों का उल्लेख किया जाता है।

अभिप्रेरण की चर्चा करते समय 'आवश्यकता' शब्द का बहुधा प्रयोग किया जाता है। आवश्यकता शारीरिक असंतुलन या कमी की ओर संकेत करती है। भोजन की आवश्यकता इसलिए महसूस होती है क्योंकि भोजन की कमी ने शरीर की रासायनिक संरचना को बदल दिया है या अस्त व्यस्त कर दिया है और शरीर में भोजन के पहुंचने से मौलिक सामान्य स्थिति पुन: आ जाती है। शरीर में किसी तत्व के सामान्य से अधिक हो जाने पर भी उसे कम करने की आवश्कता होती है। अत: सामान्य शारीरिक दशा से विचलन ही आवश्यकता है।

आवश्यकताओं पर ही आधारित एक अन्य संप्रत्यय है अन्तर्नोद। अन्तर्नोद का भी शरीर क्रियात्मक आधार होता है। यह भी आवश्यकता के साथ-साथ घटता बढ़ता रहता है। जिसके कारण कभी-कभी दोनों को एक ही मान लिया जाता है। अत: दोनों में अंतर जान लेना आवश्यक है। वास्तव में अन्तर्नोद न कहकर जैविक अन्तर्नोद कहना अधिक उपयुक्त होगा क्योंकि यह मस्तिष्क क्रिया का ऐसा रूप है जो आवश्यकताओं के फलस्वरूप उत्पन्न होता है। अन्तर्नोद व्यवहार से सम्बन्धित होता है जबकि आवश्यकता मूलत: शारीरिक होती है। आवश्यकता में कमी करने के लिए

व्यवहार करने की प्रवृत्ति ही अन्तर्नोद है। स्पष्ट है कि आवश्यकताएं अन्तर्नोद को क्रियाशील करती हैं और अन्तर्नोद व्यवहार को क्रियाशील करता है। यह व्यवहार को प्रारम्भ करता है तथा उसे गति देता है। विशिष्ट आवश्यकताओं में व्यवहार अन्तर्निहित नहीं होता है। साथ ही कुछ व्यवहार ऐसे भी होते हैं जिनके पीछे कोई ज्ञात आवश्यकता भी नहीं दिखती। आवश्यकताएं ऐसी भी होती हैं जिनसे सम्बन्धित अन्तर्नोद न हों। अन्तर्नोद का आवश्यकता से भेद स्पष्ट करने के लिए यह पुन: कहा जा सकता है कि शरीर में कोई कमी या असन्तुलन की आवश्यकता है और उस आवश्यकता की पूर्ति के लिए किया गया व्यवहार अन्तर्नोद की उपस्थिति बताता है। उदाहरणार्थ व्यक्ति को भोजन की आवश्यकता हो सकती है क्योंकि उसके शरीर में इसकी कमी है, किन्तु यदि उसमें भूख का अन्तर्नोद न हो तो वह उसे प्राप्त करने के लिए कोई व्यवहार नहीं करेगा। यदि किसी चूहे को भोजन देना बन्द कर दें तो मरने तक उसकी भोजन की आवश्यकता बढ़ती ही जाती है। दूसरी तरफ उसके भूख का अन्तर्नोद प्रारम्भ में जब वह भोजन को प्राप्त करने के लिए प्रयास करता है तब तो बढ़ता है किन्तु बाद में अन्तर्नोद कम होने लगता है, भोजन पाने का उसका प्रयास घटता जाता है। अन्तर्नोद व्यवहार को क्रियाशील करता है और अतिभूख की स्थिति में अन्तर्नोद कम हो जाने के कारण क्रियाशीलता भी कम हो जाती है। आवश्यकता तथा अन्तर्नोद में एक अन्तर यह भी है कि परिणति या फलागम क्रिया से अन्तर्नोद में तो कमी हो जाती है परन्तु आवश्यकता में कोई कमी नहीं होती।

मारगन (1957) ने एक अध्ययन में यह पाया कि काम तृप्ति के लिए लैंगिक हारमोन का होना आवश्यक है किन्तु लैंगिक क्रिया समाप्त हो जाने के बाद हारमोन में एकाएक कमी नहों आती फिर भी काम-अन्तर्नोद समाप्त हो जाता है। ऐसे ही परिणाम पानी पीने तथा भोजन करने की क्रिया में भी पाये गये हैं। यह भी पाया गया है कि सादे पानी तथा सैक्रीन युक्त पानी दोनों से ही चूहे की आवश्कता तो पूरी हो जाती है। परन्तु दोनों वस्तुओं से अन्तर्नोद समान रूप से पूरा नहीं होता। यहां यह स्पष्ट कर देना

Scanned with CamScanner

उचित होगा कि अन्तर्नोद शब्द को केवल एकवचन में ही प्रयोग किया जाना चाहिए क्योंकि अन्तर्नोद एक अभिप्रेरक तत्व है जो व्यवहार को संचालित करता है, उसे दिशा नहीं देता। आवश्यकताएँ विशिष्ट या अनेक हो सकती हैं। चूंकि आवश्यकताएं अन्तर्नोद की स्रोत हैं, अन्तर्नोद के स्रोत अनेक हो सकते हैं लेकिन वे स्वयं अन्तर्नोद नहीं है यथा भूखा अन्तर्नोद, प्यास अन्तर्नोद, काम अन्तर्नोद आदि। अन्तर्नोद एक प्रवृत्ति है जिसके अनेक स्रोत हैं।

अभिप्रेरण के सन्दर्भ में अन्तर्नोद के ही समान एक दूसरा संप्रत्यय है अभिप्रेरक। यह कहा जा चुका है कि अन्तर्नोद व्यवहार को गति प्रदान करने की प्रवृत्ति है जिससे शारीरिक असन्तुलन या कमी दूर हो सके। इस प्रकार अन्तर्नोद मूलत: जैविक है जिसे अनार्जित या जन्मजात माना जा सकता है। इसी कारण जैविक अन्तर्नोद की बात की जाती है। किन्तु व्यवहार का लक्ष्य जन्मजात के साथ-साथ अर्जित भी हो सकता है। व्यवहार के अर्जित लक्ष्य को अभिप्रेरक कहते हैं। यह किसी ऐसे लक्ष्य की परिभाषा या इच्छा है जिसने व्यक्ति के लिए मूल्य अर्जित कर लिया है। लक्ष्य की इच्छा के कारण व्यक्ति अभिप्रेरक की तुष्टि के तरीके सीख लेता है। कुछ लोगों का कहना है कि अभिप्रेरक अन्तर्नोद से ही उत्पन्न होते हैं।

अभिप्रेरक को स्पष्ट रूप से समझने के लिए प्रोत्साहन के संप्रत्यय को भी जान लेना आवश्यक है। यदि अन्तर्नोद तथा अभिप्रेरक अभिलाषाएं और प्रवृत्तियाँ हैं, तो प्रोत्साहन वह उद्दीपक है जो अन्तर्नोद या अभिप्रेरक को प्रारम्भ करने में सहायता करता है। अन्तर्नोद अनुप्रेरणा को जागृत करता है। स्पष्ट है कि प्रोत्साहन लक्ष्य-वस्तु है। यदि लक्ष्य- वस्तु ऐसी है जिसे प्राप्त करने के लिए व्यक्ति अभिप्रेरित होता है, तब उस वस्तु में धनात्मक प्रोत्साहन मूल्य होता है। यदि लक्ष्य वस्तु ऐसी है जिससे बचने के लिए व्यक्ति अभिप्रेरित होता है तब उस वस्तु का ऋणात्मक प्रोत्साहन मूल्य होता है। किसी व्यवहार के होने या किसी दशा में कोई व्यवहार करने की सम्भावना इस बात पर निर्भर करती है कि लक्ष्य वस्तु में कैसा और कितना प्रोत्साहन मूल्य विद्यमान है। हल (1952) ने अपने अधिगम सिद्धान्त में

प्रोत्साहन मूल्य को अन्तर्नोद के बराबर महत्व दिया। यदि अन्तर्नोद के अभाव में अनुक्रिया सम्भाव्यता शून्य हो जाती है, तो वह प्रोत्साहन के अभाव में भी शून्य हो जायेगी।

ऊपर चर्चित विभिन्न अभिप्रेरणात्मक संप्रत्ययों को संक्षेप में इस प्रकार प्रस्तुत कर सकते हैं-आवश्यकताएं शारीरिक असन्तुलन तथा कमी की स्थितियाँ हैं। इन कमियों या असन्तुलनों को दूर करने के लिए व्यक्ति क्रिया करता है, चालित होता है। इस प्रकार अन्तर्नोद लक्ष्योन्मुखी व्यवहार है-यह लक्ष्य प्राप्ति की प्रवृत्ति जन्मजात होती है। व्यक्ति कुछ लक्ष्यों को जीवन क्रम में अर्जित भी कर लेता है। इन अर्जित लक्ष्यों को प्राप्त करने की प्रवृत्ति भी अर्जित की जा सकती है। इन अर्जित प्रवृत्तियों को जो मूलत: मनोवैज्ञानिक होती हैं अभिप्रेरण की संज्ञा दी जाती है। सम्भवत: ये अर्जित प्रवृत्तियाँ अन्तर्नोद से उत्पन्न होती हैं। इस प्रकार व्यवहार के दो निर्धारक तत्व हुए-एक जन्मजात अन्तर्नोद और दूसरा अर्जित अभिप्रेरक। व्यवहार की ये प्रवृत्तियाँ लक्ष्योमुखी होती हैं और स्वयम् लक्ष्य वस्तु में धनात्मक या ऋणात्मक प्रोत्साहन मूल्य होता है। कुछ वस्तुओं को प्राप्त करना प्राणी का लक्ष्य होता है, तो कुछ वस्तुओं का त्याग करना या उनसे बचना लक्ष्य होता है।

अभिप्रेरणा के प्रकार

अभिप्रेरणा दो प्रकार की होती है:-

1. आन्तरिक अभिप्रेरणा (Intrinsic Motivation)
2. बाह्य अभिप्रेरणा (Extrinsic Motiviation)

1. आन्तरिक अभिप्रेरणा

(Natural Motivation)

यह अभिप्रेरणा प्रत्यक्ष रूप से व्यक्ति की प्राकृतिक इच्छाओं, आवश्यकताओं, प्रवृतियों या आत्मिक आनन्द के साथ सम्बन्धित होती है। आन्तरिक रूप से अभिप्रेरित व्यक्ति किसी कार्य को इसलिए करता है, क्योंकि इस काम को करने में उसे हार्दिक प्रसन्नता मिलती है । जब कोई भी विद्यार्थी गणित की

Scanned with CamScanner

आवश्यकताएं तथा चालनाएं जन्मजात होती हैं परन्तु उनको कार्यान्वित करने के लिए प्रक्रियाओं को सीखना पड़ता है। यह आवश्यकताएं तो अभिप्रेरणा के मौलिक आधार हैं परन्तु कुछ ऐसी अवस्थाएं भी हैं जिनको अभिप्रेरणा से अलग नहीं गिना जा सकता जैसे कुछ बन कर दिखाने की इच्छा या कुछ हट कर करने के आकांक्षा।

2. ***प्रतिबल उत्पान***- प्रेरणाएं व्यक्ति में लक्ष्य प्राप्त करने के लिए तनाव व प्रतिबल दोनों का संचार करती हैं। जिसके फलस्वरूप व्यक्ति सभी सम्भव प्रयासों द्वारा लक्ष्य प्राप्ति की कोशिश करता है। जैसे विद्यार्थी परीक्षा में सर्वाधिक अंक प्राप्त करने हेतु दिन रात एक करे पढ़ाई करता है।

3. ***निरन्तरता***- निरन्तरता का होता बहुत ही आवश्यक है। जब कोई काम किसी विशेष कारण से किसी विशेष लक्ष्य के लिए किया जाता है तो उसमें तब तक प्रयासों के क्रम में निरन्तरता बनी रहती है जब तक उस कार्य के लक्ष्य की प्राप्ति न हो जाए।

4. ***शक्ति संचालन***- कभी-कभी व्यक्ति द्वारा ऐसे कार्य हो जाते हैं कि उनका प्रदर्शन आश्चर्य चकित कर देता है। किसी भी विद्यार्थी की सामान्य दिनों की पढ़ाई और परीक्षा के दिनों में की गई पढ़ाई में अन्तर होता है जिसका कारण परीक्षा में अच्छे नम्बरों से उत्तीर्ण होना होता है। यही अच्छे अंक पाने की अभिप्रेरणा पढ़ाई में ज्यादा ध्यान देने की क्षमता प्रदान करती हैं।

अभिप्रेरणा के सिद्धान्त

व्यवहार के कारण के रूप में अभिप्रेरणा के तीन रूप हैं-

1. व्यवहार की प्रबलता।
2. व्यवहार का समापन।
3. किसी विशेष उद्देश्य के लिए व्यवहार का अभिप्रेरणा व पूर्वीकरण।

अभिप्रेरणा का आधार मुख्यत: बाह्य शक्तियां हैं। दोनों के कुछ शक्तिशाली पक्ष हैं और कुछ कमियां भी हैं। अभिप्रेरणा के सिद्धान्तों के दो भाग है:-

Scanned with CamScanner

(क). बाह्य-विद्यालयन सिद्धान्त।

(ख). अन्त:स्थ विद्यालयन सिद्धान्त।

(क) बाह्य-विद्यालयन सिद्धान्त- इस सिद्धान्त के अनुसार मनुष्य अपने लक्ष्य की प्राप्ति अथवा कोई पुरस्कार प्राप्त करने के लिए कार्य करता है। इस सिद्धान्त के अन्तर्गत रोजी कमाने के लिए कोई कार्य सीखना, प्रशंसा प्राप्ति के लिए काम करना, मान के लिए काम करना, पुरस्कार एवं दण्ड आदि आते हैं।

(ख) अन्त:स्थ विद्यालयन सिद्धान्त- इस सिद्धान्त के अनुसार जीवन व संघर्ष के लिए प्रेरणा व्यक्ति की आंतरिक होती है। व्यवहार अर्न्तमन से प्रेरित होता है और इसी कारण जीवन के उद्देश्यों की पूर्ति होती है। इसको अनेक सिद्धांतों द्वारा समझा जा सकता है:-

1. चालना सिद्धान्त- चालना का सिद्धान्त अन्त: सन्तुलन पर आधारित है जिसके अनुसार किसी भी प्रकार की जैविक आवश्यकता जो कि पूरी न हो शरीर की अन्त: स्थितियों को गड़बड़ा देती है। जिससे उद्दोधन उत्पन्न होता है। जिसे चालना कहा जाता है। ऐसी स्थिति में व्यवहार लक्ष्य की ओर होता हे और जीव उद्दोधन को कम करके या खत्म करके अन्त: संतुलन करने की कोशिश करता है जैसे भूख लगने पर भोजन प्राप्त करने की चालना उत्पन्न होती है। इसके भी दो भाग हैं-

(अ) गौण तथा (ब) प्राथमिक।

सर्वप्रथम हम प्राथमिक चालनाएं पर विचार करेंगे। प्राथमिक चालनाएं दैहिक होती हैं और स्वत: ही जीवन में निहित होती है, इसके लिए किसी शिक्षा की जरूरत नहीं है परन्तु गौण चालनाएं मनुष्य के अनुभव से उत्पन्न होती है, और यह शिक्षा के परिणामस्वरूप होती हैं जैसे धन को प्राप्त करने के तरीके, समाज में रहने, इज्जत प्राप्त करने की इच्छा आदि। जिस सामाजिक वातावरण में व्यक्ति का भरण-पोषण होता है उसी वातावरण में वह इन आवश्यकताओं को पूरा करता है।

चलना सिद्धान्त के अभिप्रेरणा के कुछ पक्ष ही स्पष्ट होते हैं। पूर्ण रूप

से अभिप्रेरणा नहीं। इस सिद्धान्त की कुछ समस्याएं भी हैं:-

1. कभी-कभी वातावरण से प्रेरित प्रलोभन का कार्य करने के लिए अभिप्रेरित करते हैं जबकि इसके लिए अन्त:स्थ चालना नहीं होती।

2. असंख्य घटनाएं सबलनकर्ता का कार्य करती है।

(ब) निसर्ग सिद्धान्त- इस सिद्धान्त के अन्तर्गत वे व्यवहार जो जन्मजात हैं और किसी विशिष्ट परिस्थितियों में हर जीवन के सामान्य कार्यशील प्राणी में काम करते हैं। निसर्ग सिद्धान्त के अनुसार नैसर्गित प्रवृत्तियां पूरे व्यवहार की प्रेरणा स्त्रोत हैं। मनुष्य को जैविक निसर्ग तो प्रेरित करते ही है। साथ ही मनोवैज्ञानिक निसर्ग भी उसे अभिप्रेरित करते हैं जैसे- सहानुभूति, सामाजिकता और ईष्या आदि। कुछ मनोवैज्ञानिकों ने निसर्गों की संख्या दो बताई है तो कुछ ने 15,000 तक। परन्तु धीरे-धीरे यह धारणा फैलने लगी है कि निसर्ग व्यवहार को केवल वर्णन मात्र है व्याख्या नहीं। व्यवहारवादी सिद्धान्त के अनुसार व्यवहार की व्याख्या अवलोकनीय कार्य प्रणालियों से की जा सकती है जबकि निसर्गों के कारण अनावलोकनीय वस्तु किसी विशेष वातावरा जलित उत्तेजनाओं के कारण जीवों में व्याप्त समान व्यवहार प्रणालियों की व्याख्या निसर्ग द्वारा करना लाभप्रद है।

चालनाएं, आवश्यकताएं तथा प्रयोजन

अभिप्रेरणा को समझाने के लिए प्रयोजन, चालनाएं व आवश्यकताएं इन तीनों मानवीय मनोवैज्ञानिक संरचनाओं को जानना आवश्यक है।

1. चालना- मनोविज्ञान में जीव व्यवहार में प्रदर्शित मौलिक प्रयोजन चालना कहलाते हैं। व्यक्ति की शारीरिक क्रियाओं द्वारा जीवन के प्रयोजनों के बारे में पता चलता है। चालना को हम इस प्रकार भी कह सकते है कि चालना वो शक्ति या गाड़ी का इंजन है जो गाड़ी यानि जीवन को अपने लक्ष्य की ओर धकेलता है। ये ऐसा मनोवैज्ञानिक यंत्र है जो व्यक्ति को मौलिक प्रक्रियाओं की ओर धकेलता है जिनसे व्यक्ति को प्रत्यक्ष रूप में सन्तुष्टि प्राप्त होती है जैसे खाना, पीना आदि। चालना व्यक्ति की जीवन शक्ति या वातावरण की स्थितियों से उत्पन्न होती है जैसे भूख लगने पर

Scanned with CamScanner

आवश्यकता है तो उसको पूरा भी करना होगा। मौलिक व प्राथमिक आवश्यकताएं जैविक होती हैं जबकि गौण आवश्यकताएं मानसिक या सामाजिक होती हैं।

प्राथमिक आवश्यकताएं सबके लिए समान हैं जैसे भूख, प्यास, प्यार आदि। जबकि गौण आवश्यकताएं सभी के लिए अलग-अलग होती हैं जैसे उपलब्धि, वातसल्य, समायोजन आदि ही जीवन की बीस मुख्य आवयश्यकताएं हैं- आत्दमन, वातसल्य, स्वायतता, निर्भरता, रक्षा, अपकार-परिहार, पालन-पोषण, यौन, समझ-बूझ, तिरस्कार, क्रम-अनुशासन, सन्तोष, सहानुभूति आदि। प्रत्येक आवश्यकता की क्षमता व शक्ति प्रत्येक व्यक्ति में अलग-अलग होती है और इनकी पूर्ति के लिए वातावरण की स्थितियां, व्यक्ति के मन व तन की स्थिति पर निर्भर करती है और इसी पर परिणाम निर्भर करता है।

3. प्रयोजन- व्यक्ति के व्यवहार का मूल स्त्रोत प्रयोजन है। प्रयोजन ऐसा मूल गुण है जिससे व्यक्ति किसी भी कार्य के परिणामों के प्रति आकर्षित या अनाकर्षित होता है। सभी प्राणियों का व्यवहार अभिप्रेरित व्यवहार इसलिए होता है क्योंकि वह उद्देश्यपूर्ण होता है। यदि व्यवहार गाड़ी हे तो प्रयोजन ड्राईवर। जिस प्रकार ड्राईवर अपनी स्थिति, इच्छा या लक्ष्य अनुसार गाड़ी चलाता है उसी प्रकार प्रयोजन व्यक्ति को कार्य के लिए प्रेरित करते हैं उसमें शक्ति का संचार करते हैं।

मनोवैज्ञानिक प्रयोजनों को परोक्ष रूप से व्यवहार की वह मूल जन्मजात प्रवृत्तियां मानते हैं जिनके बल पर व्यक्ति अपनी शक्ति को या तो किसी विशेष कार्य को करने के लिए या उसका नाश करने के लिए प्रयोग में लाता है।

प्रयोजन के दो पहलू है:-

(अ) आन्तरिक पहलू- आन्तरिक पहलू से हमारा मतलब उस तनाव से है जो मूल आवश्यकताओं के पूरा होने से पैदा होता है। इसका कारण सामाजिक भी हो सकता है। जैसे चिन्ता, असफलता आदि। आवश्यकता प्रयोजन की रीड़ की हड्डी है क्योंकि प्रयोजन की उत्तेजना आवश्यकता से

Scanned with CamScanner

प्रतियोगिता में बच्चों के मन में केवल जीतने की भावना नहीं होनी चाहिए इससे उसका व्यक्तित्व असन्तुलित होता है।

4. लक्ष्य का ज्ञान होना- एक छोटे बच्चे का लक्ष्य होता है शारीरिक क्रियाओं द्वारा आनन्द की प्राप्ति। परन्तु ज्यों-ज्यों बच्चा बड़ा होता है उसमें जिज्ञासा, आत्म प्रदर्शन, संघर्ष, रचनात्मकता, उपलब्धि आदि का विकास होता है तथा उसके लक्ष्य में भी परिवर्तन आता है। यदि उसे अपने लक्ष्य का पूर्ण रूप से ज्ञान हो जाए तो ही अभिप्रेरणा का लाभ संभव है। इसलिए यह आवश्यक है कि खेलों अथवा शारीरिक क्रिया के प्रशिक्षण से पूर्व उसके सामने उसके लक्ष्य को स्पष्ट करें विद्यार्थी की शारीरिक एवं मानसिक योग्यताओं को ध्यान में रख कर ही लक्ष्य निर्धारित करना चाहिए।

5. श्रव्य-दृश्य साधनों का प्रयोग- श्रव्य-दृश्य साधनों का बच्चों और खिलाड़ियों पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है। वह टी.वी., रेडियो, चित्र आदि को देख-सुन कर उनकी ओर जल्द ही आकर्षित तथा अभिप्रेरित होते है। टी.वी. पर कोई मैच देखकर बच्चा उन खिलाड़ियों की तरह बनने के लिए प्रेरित होता है। अतः बच्चों और खिलाड़ियों को अभिप्रेरित करने के लिए श्रव्य-दृश्य साधनों का उचित उपयोग किया जाना चाहिए।

6. व्यक्तिगत विभिन्नता- प्रत्येक व्यक्ति की रूचियां तथा योग्यताएं भिन्न होती हैं। शारीरिक प्रशिक्षक को प्रत्येक खिलाड़ी की रूचि तथा योग्यता को ध्यान में रखना चाहिए। व्यक्तिगत विभिन्नता एक मनोवैज्ञानिक सत्य है। शारीरिक शिक्षक खिलाड़ियों की शारीरिक योग्यता, क्षमता के अनुसार खेलों के लिए उन्हें अभिप्रेरित करके उनको खेल में निपुणता प्राप्त करने के प्रयास के लिए सदैव तत्पर रहते है।

7. शिक्षक को व्यक्तित्व एवं व्यवहार- शिक्षक के व्यक्तित्व एवं व्यवहार का खिलाड़ियों पर बहुत प्रभाव पड़ता है। यदि शिक्षक का व्यक्तित्व एवं व्यवहार प्रेरक न हो तो सभी अभिप्रेरणाएं व्यर्थ होती है। शिक्षक की शारीरिक स्वस्थता, खिला हुआ चेहरा, उसकी बातचीत में उत्साह, उसकी वेशभूषा, उसका साहस आदि कई गुण खिलाड़ियों को अभिप्रेरित करते हैं।

Scanned with CamScanner

8. शिक्षण-सूत्रों का प्रयोग- बचपन से ही बच्चों के मन में खेल के प्रति रूचि होती है। जैसे-जैसे वह बड़ा होता है वैसे-वैसे ही उसके खेल में भी सुधार होता है। शारीरिक शिक्षक उसे अभिप्रेरित कर सकता है। इसके लिए वह सरल से कठिन स्थूल से सूक्ष्म तथा सम्पूर्ण से अंश आदि शिक्षण सूत्रों को प्रयोग कर सकता है।

9. प्रशिक्षण विधियां- प्रशिक्षण विधियों द्वारा खिलाड़ियों को अभिप्रेरित किया जा सकता है। प्रशिक्षण विधियां विद्यार्थियों के अनुकूल होनी चाहिए। उदाहरणत: किसी छोटे बच्चे को विचार-विमर्श अथवा भाषण द्वारा अभिप्रेरित नहीं किया जा सकता। क्योंकि बच्चे क्रियाशील होते हैं और सक्रिय रहना चाहते हैं। वहीं दूसरी ओर प्रौढ़ावस्था के खिलाड़ियों को विचार-विमर्श तथा भाषण द्वारा अभिप्रेरित किया जा सकता है। प्रशिक्षण-विधियां रोचक तथा मनोवैज्ञानिक होनी चाहिए। उचित प्रशिक्षण विधि से ही विद्यार्थियों को अभिप्रेरित किया जा सकता है।

विद्यार्थियों को अभिप्रेरणा सीखने के लिए कैसे प्रेरित करे?

सीखने-सिखाने की प्रक्रिया का केन्द्र बिन्दु अभिप्रेरणा है। हर एक अध्यापक को अपने विद्यार्थियों को अभिप्रेरित करना पड़ता है। जिसमें उसे कई समस्याओं का सामना भी करना पड़ता है। इसलिए यह आवश्यक है कि अध्यापक अभिप्रेरणा उत्पन्न करने वाले साधनों पर विचार करे।

1. उचित दृष्टिकोण का विकास- दृष्टिकोण का ध्यान और रूचि से गहरा सम्बन्ध है। यदि किसी बच्चे में कार्य के प्रति उचित दृष्टिकोण विकसित होता है तो वह उस कार्य को बहुत ध्यान से तथा रूचि से करेगा अन्यथा नहीं। अत: बच्चे को किसी कार्य के लिए मानसिक रूप से तैयार करने में दृष्टिकोण एक अहम भूमिका निभाता है।

2. उद्देश्यों एवं लक्ष्यों का निश्चित होना- विद्यार्थी जिस भी विषय का अध्ययन करे उसे उसके उद्देश्य को पता होना अति आवश्यक है क्योंकि यदि वह कार्य के उद्देश्य से परिचित नहीं है तो वह उसमें रूचि नहीं ले पाएगा।

3. बाल केन्द्रित दृष्टिकोण- अध्यापक का काम है बच्चे को सिखाना और बच्चे का काम है उसे सीखना। अध्यापक को बच्चे की रूचि एवं योग्यता को ध्यान में रख कर उसे सिखाना चाहिए। बच्चे को कोई काम देने या सिखाने से पहले यह जान लेना चाहिए कि बच्चे में उस कार्य को करने की योग्यता है कि नहीं? वह उसे सीखने अथवा कने के लिए मानसिक रूप से तेयार है कि नहीं?

4. सीखने के लिए उचित वातावरण एवं स्थिति- सीखने के लिए उचित वातावरण तथा अनुकूल स्थिति का होना बहुत आवश्यक है। उचित वातावरण में विद्यार्थी अध्यापक की बातों को ध्यानपूर्वक सुनता है तथा उसकी उस विषय में रूचि बढ़ती है। उचित स्कूल, आपसी सहयोग, बैठने की व्यवस्था, अध्यापक का प्यार, स्कूल क्रियाओं में भाग लेने का मौका-ये सभी बातें बच्चे के व्यवहार को अभिप्रेरित करती है।

5. स्वयं अपने पूर्व कार्य से प्रतियोगिता- इस प्रतियोगिता में व्यक्ति अपने पूर्व कार्य से बढ़कर कार्य करने की कोशिश करता है, जिससे वह आत्मरक्षा की ओर अग्रसर होता है। इससे उसे आन्तरिक अभिप्रेरणा भी मिलती है। यदि प्रतियोगिता में सहयोग को सम्मिलित कर लिया जाए तो यह सोने पर सुहागे जैसा हो जाएगा। यदि एक समूह के लोग परस्पर सहयोग करते हुए दूसरे समूह के साथ प्रतियोगिता करते हैं तो उनमें परस्पर सहयोग, मैत्रीपूर्ण व्यवहार तथा सामूहिक भावना का विकास होता है। अत: सहयोगात्मक भावना के आधार पर की गई प्रतियोगिता ही लाभप्रद रहती है।

6. शिक्षण में प्रभावशाली विषयों तथा सहायक साधनों का प्रयोग- एक अच्छा अध्यापक अपनी अच्छी शिक्षा शैली से बच्चों को सीखने के लिए प्रेरित करता है। वह नई दिशा पद्धतियों की मदद से बच्चों में रूचि उत्पन्न करता है। पुस्तकालयों, भ्रमणों तथा दृश्य साधनों से बच्चों को अभिप्रेरित करने में मदद मिलती है।

7. दूसरों से प्रतियोगिता- इस प्रतियोगिता में कई बार दूसरों से आगे निकलने की होड़ में व्यक्ति अनुचित साधनों को प्रयोग करता है।

Scanned with CamScanner

8. पुरस्कार एवं दण्ड- पुरस्कार एवं दण्ड व्यक्ति के व्यवहार को प्रभावित करते हैं। यह दोनों ही शक्तिशाली अभिप्रेरक हैं। एक ओर जहां दण्ड नकारात्मक अभिप्रेरक है तो पुरस्कार स्वीकारात्मक अभिप्रेरक है। दण्ड से व्यक्ति में असफलता, अपमान तथा शारीरिक पीड़ा उत्पन्न होती है। व्यक्ति में स्वतन्त्र चिन्तन की भावना का नाश होता है। पुरस्कार से व्यक्ति का हृदय आनन्द से भर जाता है। पुरस्कार से विद्यार्थियों में निर्माणात्मक योग्यताओं, आत्म योग, आत्म सम्मान, आत्म विश्वास तथा कई भावनाओं का विकास होता है।

9. परिणाम एवं प्रगति का ज्ञान- प्रत्येक विद्यार्थी को अपने किए गए कार्य के परिणाम की जिज्ञासा होती है। परिणाम के बाद ही उसे अपनी गलतियों का ज्ञान होता है तथा वह उन्हें सुधारने के लिए प्रेरित होता है। अध्यापक को चाहिए कि वह विद्यार्थी को उसकी प्रगति से परिचित कराए ताकि वह उसमें सुधार ला सके। इसके लिए जरूरी है कि स्कूल में रिकार्ड, ग्राफ, चार्ट आदि की उचित व्यवस्था हो।

उपरोक्त लिखी बातों का यह अर्थ नहीं कि विद्यार्थी का दण्ड नहीं देना चाहिए। कई बार दिया गया दण्ड भी विद्यार्थियों के लिए उपयोगी सिद्ध होता है। कई बार विद्यार्थियों का उद्देश्य सिर्फ पुरस्कार जीतना बन जाता है। वह पुरस्कार जीतने की होड़ में सीखने में रूचि नहीं अपितु पुरस्कार में रूचि रखता है। इसलिए यह अत्यन्त आवश्यक है कि अध्यापक दण्ड तथा पुरस्कार दोनों का ही प्रयोग सावधानी पूर्वक कर

खिलाड़ियों को खेल के प्रति अभिप्रेरित करने वाले तत्त्व (Factors that Motivate a Sportsperson Towards Sports)

1. अच्छा वातावरण (Good Environment)

खिलाड़ियों को खेल के प्रति अभिप्रेरित करने के लिए खेल का अच्छा वातावरण और खेल से सम्बन्धित अच्छी सुविधाएं उपलब्ध होनी चाहिए। जैसे सुन्दर व साफ-सुथरे खेल के मैदान, अच्छे उपकरण आदि खिलाड़ियों के खेल के प्रति रूचि बढ़ाने में सहायक है।

2. छात्रवृतियां (Scholarship)

खिलाड़ियों का खेल के प्रति रूचि पैदा करने के लिए यह जरूरी है कि बच्चों को समय-समय पर छात्रवृतियों की व्यवस्था होनी चाहिए। यदि छात्रवृति की व्यवस्था की जाए तो बच्चे खेलों के प्रति ज्यादा अभिप्रेरित होगा। इसका आधार राष्ट्रीय, अर्न्तराष्ट्रीय प्रतियोगिता में भाग लेना होना चाहिए।

3. उद्देश्य का निर्धारण (To Decided the Goal)

किसी भी प्रक्रिया को सीखने से पहले एक प्रशिक्षक को यह ध्यान रखना जरूरी है कि वह उसका उद्देश्य बच्चों को बता देना चाहिए। जब तक उद्देश्य स्पष्ट नहीं होगा बच्चे किसी भी अच्छी तरह नहीं सीख पाएगा।

4. आसानी से मुश्किल की ओर (Easy to complex)

यह भी बच्चों को अभिप्रेरित करने का एक महत्वपूर्ण साधन है। इसका अभिप्राय: यह है कि बच्चों को हमेशा आसान से मुश्किल के नियम का पालन करना चाहिए। अर्थात् बच्चों को पहले वो चीज सिखानी चाहिए जो आसान हो बाद में मुश्किल चीज सिखानी चाहिए। नहीं तो बच्चों उस क्रिया से ऊभ जाते हैं।

5. प्रतियोगिता (Competition)

खिलाड़ियों को अभिप्रेरित करने का एक और अच्छा तरीका प्रतियोगिता। जितनी ज्यादा प्रतियोगिताओं को आयोजन करेंगे उतने ही खिलाड़ियों की खेल के प्रति रूचि बढ़ेगी और साथ-साथ खिलाड़ियों की दक्षता में भी बढ़ौतरी होगी। लोगों की भी खेलों के प्रति रूचि बढ़ाने के लिए जगह-जगह खेल प्रतियोगिताएं करवाते रहना चाहिए।

6. सफलता और उपलब्धियों का ज्ञान (Knowledge about Success & Achievements)

यह भी खिलाड़ी को अभिप्रेरित करने का एक माध्यम है यदि खिलाड़ी

Scanned with CamScanner